वर्ष : 8
अंक : 59

संत श्री आसारामजी आश्रम
द्वारा प्रकाशित

नवम्बर
1997
6/-

ऋषि प्रसाद

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ८
अंक : ५९
९ नवम्बर १९९७

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८० ००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८० ००५ ने पारिजात प्रिन्टरी एवं भार्गवी प्रिन्टर्स, राणीप, अमदावाद में तथा पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

अमदावाद आश्रम के फोन नंबर बदल गये हैं। नये नंबर इस प्रकार हैं : (079) 7505010, 7505011.

प्रस्तुत है...

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग : ZEE टी.वी. चैनल पर रोज सुबह ७ से ७.३०. ATN चैनल पर रोज सुबह ७-३० से ८. YES चैनल पर रीज सुबह ८ से ८.३०.

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

अपने को ही जान न पाया

अपने को ही जान न पाया।
औरों को पहचान न पाया।
इधर-उधर की करते-करते जीवन खोया है ॥
सुख में हँसा गर्व से फूला।
ममता के झूले में झूला।
ठोकर एक लगी तब चेता दुःख में रोया है ॥
दुनियाँ इतनी बड़ी कि जिसका।
मुश्किल ओर-छोर है पाना।
दानधर्म को पुण्यकर्म को नित प्रति करता रहा बहाना ॥
कौड़ी-कौड़ी माया जोड़ी।
फिर भी रीता रहा खजाना।
सुमिरन-भजन बिना अज्ञानी लगा रहा आना औ' जाना ॥
फूल कहाँ खिलते परती पर ?
सब रह जाता है धरती पर।
तब फिर गट्ठर पाप कर्म का क्यों कर ढोया है ?
पल में बढ़े नाश हो पल में।
नर की देह बुलबुला जल का।
अगले पल का पता नहीं तब क्यों विश्वास कर रहा कल का ?
तेरे हाथ कर्म है केवल।
दाता तो ईश्वर है फल का।
तू ही भ्रमित हुआ है बन्दे वह मालिक है नभ जल थल का ॥
सनातन धर्म सत्कर्म सिखाता।
वही प्रेम का पाठ पढ़ाते।
द्वेष-क्रोध का बीज बिषैला क्यों कर बोया है ?
अब भी जाग सके तो जग जा।
हाथों से कर ले अच्छाई।
पर-उपकार पाठ पढ़ नित ही तज दे द्वेष विरोध बुराई ॥
जल-दर्पण में बिम्ब न दिखे।
उसमें अगर जमी हो काई।
यह तो माना शुरू-शुरू में होती है थोड़ी कठिनाई ॥
सूरज जगे हरे अंधियारा।
तू तज अंधकार की कारा।
इस प्रभात की शुभ बेला में क्यों कर सोया है ?

- बनवारीलाल सोनी,
जयपुर (राज.)

मुक्ति का जतन तू कर

मन रे ! प्रभु का भजन नित कर।
बंधन-मुक्ति का जतन तू कर ॥
होनी तो रहती है होकर।
किसने यहाँ न खाई ठोकर ॥
जीवन है जकड़ा उलझन में।
काँटों भरी है जग की डगर ॥
करना कुछ चाहते हो अगर।
लिप्सा को अपनी खूब रगड़ ॥ मन रे...
दुःख से यहाँ बचा न कोई।
किसकी आँखें यहाँ न रोई ॥
कितने दीप जलाओगे तुम।
अंधकार भरा है हर नगर ॥
करना कुछ चाहते हो अगर।
मारो विषय-वासना का मगर ॥ मन रे...
काट फेंको फंदा माया का।
छोड़ो मोह नश्वर काया का ॥
बनकर योगी तय करना है।
संबंधों का लंबा सफर ॥
करना कुछ चाहते हो अगर।
इन्द्रियों को अपने वश में कर ॥ मन रे...

- अतुल गोस्वामी
वल्लभगढ़ (हरि.)

विजय का रहस्य : ईश्वर और पुरुषार्थ

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥

'जहाँ योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीव धनुषधारी अर्जुन हैं वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है - ऐसा मेरा मत है।'

(गीता : १८. ७८)

भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय का यह आखिरी श्लोक है। गीता के सात सौ श्लोकों में यह अंतिम श्लोक है। इसमें अर्जुन का कोई प्रश्न नहीं है और श्रीकृष्ण का कोई उत्तर नहीं है। यह संजय का अभिप्राय है, उनका अपना मत है। लेकिन यह केवल संजय का ही मत नहीं वरन् सब शास्त्रकारों का मत है कि जहाँ शक्ति के पुंज योगेश्वर श्रीकृष्ण हों... कृष्ण माना शुद्ध सच्चिदानंद, अनंत-अनंत ब्रह्माण्डों को सत्ता, स्फूर्ति, चेतना देनेवाला तत्त्व जहाँ हो और पुरुषार्थी जीव अर्जुन हो वहाँ विजय होगी ही।

> *चराचर जगत को धारण करनेवाली शक्ति के निकट जो होता है, जिसको उस शक्ति का आधार है उसके पास विजय और श्री अवश्य आ जाते हैं।*

एक बार अर्जुन और हनुमानजी कुछ चर्चा कर रहे थे। हनुमानजी ने कहा :

''हमने बड़े-बड़े पत्थरों से सेतु बाँधा... पूरी वानर सेना रामजी के साथ लंका पहुँच गयी... फिर लंका में तबाही मचा दी। रामजी ने रावण के साथ ऐसे-ऐसे युद्ध किया... रावण को इस प्रकार हराया गया और विजयी हुए।''

> *परमात्मा अचल है। जिसके पक्ष में परमात्मा है उसके विचार भी अचल हो जाते हैं और संकल्प भी दृढ़ हो जाते हैं।*

तब अर्जुन ने कहा : ''पवनपुत्र ! आपकी और सब बातें तो ठीक लगीं लेकिन पुल बाँधने के लिये बड़े-बड़े पत्थर उठाने की मजदूरी क्यों की ? मुझ जैसे को बुला लेते। घड़ीभर में अपने बाणों से पुल बाँध देता।''

हनुमानजी : ''तुम बाणों से पुल तो बाँध लेते लेकिन वह पुल तो केवल मेरा बोझ ही नहीं सह सकता जबकि वहाँ तो मेरे जैसे कई वानर थे। पूरी सेना को सागर पार करना था तो कैसे काम बनता ?''

अर्जुन : ''पूरी सेना पार हो जाती इसमें क्या बड़ी बात थी ?''

हनुमानजी : ''ठीक है, तुम पुल बनाकर दिखाओ। मैं अगर उसके ऊपर से सही-सलामत पार हो जाऊँ तो मैं समझूँगा कि सेना भी पार हो सकती थी।''

अर्जुन ने समुद्र की ओर बाण फेंकने शुरू किये और देखते-ही-देखते पुल बना दिया। हनुमानजी ने मारी छलांग और पुल पर से चलने लगे। पुल हिलने लगा। अर्जुन घबराये। उन्होंने मन-ही-मन श्रीकृष्ण का, सच्चिदानंद परमात्मतत्त्व का ध्यान किया। पुल हिला लेकिन टूटा नहीं, डूबा नहीं। हनुमानजी ने खूब जोर मारा लेकिन पुल टस से मस नहीं हुआ।

हनुमानजी ने कहा : ''तुम्हारा पुल तो बड़ा मजबूत है ! पहले तो डाँवाडोल हो रहा था फिर एकाएक क्या हुआ पता नहीं, एकदम स्थिर, मजबूत लगने लगा।''

इतने में श्रीकृष्ण आये। उन्हें देखकर हनुमानजी ने कहा :

''अच्छा... तुमने श्रीकृष्ण का ध्यान किया था इसलिए वहाँ पुल के नीचे श्रीकृष्ण-तत्त्व ने काम किया। यह तुम्हारे बाणों के बल से नहीं टिका वरन् तुम्हारे संकल्प के

बल से टिका है।''

अर्जुन : ''फिर तो वह पत्थर का पुल भी आपके पत्थर फेंकने के कारण नहीं वरन् आपकी श्रद्धा और संकल्प के बल से टिका था।''

श्रीकृष्ण ने दोनों की बातों का अनुमोदन किया और अपनी पीठ दिखाते हुए कहा : ''जब अर्जुन ने कृष्ण-कृष्ण करके ध्यान किया तो पुल के नीचे मुझे आना पड़ा। पुल को सँभालना पड़ा।''

यह तो केवल बाणों के पुल को सँभालने की बात थी लेकिन अर्जुन के तो जीवनरूपी पुल को भी श्रीकृष्ण ने सँभाल लिया था। अत: अर्जुन की विजय हो इसमें क्या आश्चर्य है !

यत्र योगेश्वर: कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धर: ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥

...तो यह केवल संजय का मत नहीं है। सब शास्त्रों का मत है, सब महापुरुषों का मत है कि जहाँ परमात्म-चेतना है और जहाँ पुरुषार्थ है वहाँ विजय, श्री और स्थायी नीति रहती है इसमें कोई संदेह नहीं है।

कई विद्वान लोग इस श्लोक का कम आदर करते हैं लेकिन इसमें सब शास्त्रों की खबरें मिलती हैं। सचमुच में संजय ने इस श्लोक में गीता के स्थूल भाव को समझनेवालों को एक इशारा दे दिया है कि श्रीकृष्ण माने जो चराचर जगत को धारण करनेवाली शक्ति है उस शक्ति के निकट जो होता है, जिसको उस शक्ति का आधार है उसके पास विजय और श्री अवश्य आ जाते हैं।

श्लोक में कहा गया है कि जिसकी तरफ श्रीकृष्ण हैं और पुरुषार्थी अर्जुन है उसीकी विजय होती है। चैतन्य परमात्मा तो सबकी तरफ हैं लेकिन आलसी-प्रमादी की विजय नहीं होती। जो पुरुषार्थ करते हैं लेकिन श्रीकृष्ण को छोड़कर पुरुषार्थ करते हैं तो भी सफल नहीं होते हैं। जब ईश्वर को छोड़कर पुरुषार्थ करते हैं और कुछ सफलता मिलती है तो अहंकार आ जाता है कि 'मैंने किया।' अहंकार बड़ी पराजय है। ईश्वर को छोड़कर पुरुषार्थ भी नहीं करना वह भी खराब है। किंतु पुरुषार्थ भी हो और ईश्वर का भी साथ हो तो... संजय कहते हैं कि वहाँ विजय होगी ही।

परमात्मा अचल है। जिसके पक्ष में परमात्मा है उसके विचार भी अचल हो जाते हैं और संकल्प भी दृढ़ हो जाते हैं। वह विकल्प से अपनी शक्ति काटता नहीं है। चैतन्य परमात्मा की शक्ति तो सबके पास है लेकिन विकल्पों के द्वारा मनुष्य अपनी शक्ति को क्षीण कर देता है। जो अपनी शक्ति को सेवा में, सत्कर्म में, साधन-भजन में लगाना चाहते हैं वे निराशा के, संशय के विचार करने की गलती न करें। 'हम सफल होंगे कि नहीं होंगे...' ऐसे विकल्प करके अपनी शक्तियों को क्षीण करने की जरूरत नहीं है।

Try and try you will succeed.

दृढ़ निश्चय करके अपनी शक्तियों को सत्य पाने में लगा दो। तुम्हारे अंदर जो संशयरूपी असुर है वही तुम्हारी तमाम शक्तियों को, सामर्थ्य को छीन रहा है। उसे तुम दृढ़ होकर नष्ट कर दो। दुर्बलता से ही भीतर के काम-क्रोध-लोभ-मद-ईर्ष्या-असूया जैसे दुर्गुण पनपते हैं। वे तुम्हें अधिक दुर्बल बनाते हैं। इनसे बचने के लिये भीतर का बल, आत्मिक बल जगाओ। यदि शरीर को 'मैं' मानोगे तो निंदा सुनकर सिकुड़ जाओगे

(शेष पृष्ठ १४ पर)

चैतन्य परमात्मा की शक्ति तो सबके पास है लेकिन विकल्पों के द्वारा मनुष्य अपनी शक्ति को क्षीण कर देता है।

दुर्बलता से ही भीतर के काम-क्रोध-लोभ-मद-ईर्ष्या-असूया जैसे दुर्गुण पनपते हैं। वे तुम्हें अधिक दुर्बल बनाते हैं। इनसे बचने के लिये भीतर का बल, आत्मिक बल जगाओ।

जब तक मानव ने अपनी कल्पनाओं पर विजय नहीं पाई तब तक वह विजयी नहीं माना जाएगा। कल्पनाओं से पार कल्पनाओं का जो आधार है उसे जान लेना ही वास्तविक विजय है।

भवबंधन का कारण : मोह

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च ।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नम: ॥

कुंतीजी भगवान श्रीकृष्ण से प्रार्थना करती हैं :

'आप समस्त जीवों के भीतर-बाहर बस रहे हैं, आप ही सब प्राणियों के आधार हैं फिर भी आपकी योगमाया से जीव आपको नहीं पहचान पाते हैं। आप श्रीकृष्ण, वासुदेव, देवकीनंदन, नन्दगोपकुमार, गोविंद को मेरा प्रणाम है।

हे केशव ! कोई कहता है कि आप पृथ्वी का भार उतारने के लिए धरती पर आये हैं। कोई कहता है कि आप वसुदेव-देवकी की तपस्या के फलस्वरूप अवतार लेकर उनका मंगल करने के लिए आये हैं। कोई कहता है कि भक्तों को साकार विग्रह के दर्शन देकर उन्हें भक्तियोग में आगे बढ़ाने के लिए अवतरित हुए हैं... लेकिन मैं तो यही कहूँगी कि हे नारायण ! आप मेरे लिये ही आये हैं।

हे प्रभु ! आप मुझ पर एक विशेष कृपा करो कि पाण्डवों के प्रति एवं यदुवंश के प्रति जो मेरा मोह है उसे निवृत्त करो। मोह सब व्याधियों का मूल है क्योंकि जीव को जन्म-मरण के चक्र में डालनेवाला मोह ही है।'

तुलसीदासजी भी कहते हैं :

मोह सकल व्याधिन करं मूला।
ताते ऊपजे पुनि भवशूला ॥

कुंतीजी तो केवल पाण्डवों एवं यदुवंशियों के प्रति मोहनिवृत्ति का आशीर्वाद माँगती हैं जबकि हमारा तो न जाने कितनी ही बातों से मोह हो जाता है। देह से, गेह से, पुत्र-परिवार से, नौकरी-धंधे से, न जाने किस-किससे मोह करके हम बँध रहे हैं।

देह भी तीन प्रकार की है : (१) स्थूल देह (२) सूक्ष्म देह और (३) कारण देह

स्थूल देह में मोह होने का फल है जगत की वस्तुओं का आकर्षण। स्थूल देह में जिसका मोह ज्यादा है उसको जगत के विकारी भोगों में आकर्षण हुए बिना नहीं रहता।

सूक्ष्म देह में जिसका मोह होता है उसको अपने सिद्धांतों के प्रति आकर्षण होता है।

जिसका कारण देह में मोह होता है उसे अपनी स्थिति में आकर्षण होता है।

लेकिन कैसी भी स्थिति आये, वह सब होगी माया में ही।

गो गोचर जहँ लगि मन जाई।
सो सब माया जानेहु भाई॥

जहाँ तक मन और इन्द्रियाँ जा सकती हैं वह सब माया है।

जोग बियोग भोग भल मंदा।
हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा ॥
जनमु मरनु जहँ लगि जग जालू।
संपत्ति बिपति करम अरु कालू ॥
धरनि धामु धनु पुर परिवारू।
सरगु नरकु जहँ लागि व्यवहारू ॥
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माँहीं।
मोहमूल परमारथु नाँहीं ॥

'संयोग-वियोग, भले-बुरे भोग, शत्रु-मित्र और उदासीन- ये सभी भ्रम के फंदे हैं। जन्म-मृत्यु, संपत्ति-विपत्ति, कर्म और काल- जहाँ तक जगत के जंजाल हैं... धरती, घर, धन, नगर, परिवार, स्वर्ग और नरक आदि जहाँ तक व्यवहार हैं... जो देखने, सुनने और मन के अंदर विचारने में आते हैं उन सबका मूल मोह (अज्ञान) है। परमार्थत: ये नहीं हैं।'

(श्रीरामचरित० अयोध्याकांड : ९१.३,४)

इसीलिए कुंतीजी प्रार्थना करती हैं कि : 'प्रभु ! मेरा मोह दूर हो जाये।' व्यक्त-अव्यक्त सबमें आप-ही-

आप हैं किन्तु मोह के कारण नहीं दिखता है। जैसे, हाथ में पित्तल की कटोरी रखकर गुरु पूछते हैं :

''बेटा ! यह क्या है ?''

''गुरुजी ! यह कटोरी है।''

''इसके पहले क्या दिखता है ?''

''गुरुजी ! आपका हाथ दिखता है।''

''नहीं, कटोरी से पहले क्या है ?''

''गुरुजी ! पित्तल की कटोरी है।''

''बेटा ! जैसे पहले पित्तल है फिर कटोरी है ऐसे ही गहराई से देखो तो पहले सच्चिदानंद परब्रह्म परमात्मा है, बाद में जगत है लेकिन मोह के कारण जगत ही जगत दिखता है।''

जगत भी दो प्रकार का है : (१) ईश्वरीय जगत (२) जीव-जगत

ईश्वरीय सृष्टि में एक लड़के या लड़की का जन्म होता है जबकि जीव की सृष्टि में वही लड़का या लड़की किसीके बेटे या बेटी कहलायेंगे... किसीके भतीजे या भतीजी कहलायेंगे... बड़े होने पर किसीके पति या पत्नी कहलायेंगे... किसीके मामा या मामी कहलायेंगे... वे ही जब मरे तो ईश्वर की सृष्टि में तो एक ही मरा किन्तु जीव की सृष्टि में किसीका पति मरा तो किसीका काका, किसीका मौसा मरा, किसीका दादा और किसीका नाना। अपनी-अपनी कल्पित सृष्टि के अनुसार सुख-दुःख होता रहता है।

अभी इस समय धरती पर ५०० करोड़ के करीब लोग हैं। उन ५०० करोड़ में से ४,९९,९९,९०० लोगों से आपको कोई ममता नहीं है, कोई मोह नहीं है। धरती पर करोड़ों मकान होंगे, करोड़ों दुकानें होंगी, करोड़ों गाड़ी-मोटरें होंगी उन पर आपको कोई मोह-ममता नहीं है। बहुत-बहुत तो १०० व्यक्ति के प्रति आपकी ममता होगी। १०० में भी काट-छाँट करें तो उनमें से भी दो-तीन में ही मुख्यरूप से मोह-ममता टिकी होगी। जब इतनी-इतनी मोह-ममता त्याग करके बैठे हो तो बाकी की दो-चार जगह से मोह-ममता हटा दो तो परमात्म-प्राप्ति होने में बाधा ही नहीं रहेगी।

दो-चार जगह से मोह-ममता हटा दो तो परमात्म-प्राप्ति होने में बाधा ही नहीं रहेगी।

इस समय धरती पर न जाने कितनी-कितनी जगहों पर शव जलते होंगे फिर भी आपको कोई दुःख नहीं और कितनी-कितनी जगहों पर संतान का जन्म होता होगा फिर भी आपको कोई सुख नहीं। क्यों ? क्योंकि उनमें मोह-ममता नहीं है। जब इतना-इतना छोड़ रखा है तो फिर दो-पाँच-पच्चीस का मोह छोड़ने में क्या परेशानी ? लेकिन बार-बार उनमें सत्यबुद्धि होती है। भगवद्-चिंतन की अपेक्षा उन्हीं आकृतियों का चिंतन होता है इसीलिए परेशानी होती है। हालाँकि वे आकृतियाँ और नाम-रूप भी मायामात्र हैं।

माया = या मा सा माया।

जो नहीं है फिर भी दिखता है वह है माया।

देखत नैन चल्यो जग जाई।
का माँगूँ कछु थिर न रहाई ॥

फिर भी बार-बार उसी जगत का चिंतन होता है। जिस सत्य की सत्ता से यह माया सत्य जैसी दिखती है उस मायापति की शरण गये बिना, उस मायापति से प्रीति किये बिना, उस मायापति के ज्ञान का श्रवण किये बिना इस माया का प्रभाव चित्त से निवृत्त नहीं होता।

कुंतीजी कहती हैं श्रीकृष्ण से कि : ''हे जगद्गुरु श्रीकृष्ण ! हमारे जीवन में सर्वदा विपदाएँ लाना। क्योंकि भोग-वासना तो मोह बढ़ाती हैं जबकि विपदा में आपकी स्मृति होती है।''

कुंतीजी कहती हैं श्रीकृष्ण से कि : " हे जगद्गुरु श्रीकृष्ण ! हमारे जीवन में सर्वदा विपदाएँ लाना। क्योंकि भोग-वासना तो मोह बढ़ाती हैं जबकि विपदा में आपकी स्मृति होती है।"

कबीरजी ने कहा है :

सुख के माथे सिल पड़े
जो नाम हृदय से जाये।
बलिहारी वा दुःख की
जो पल पल नाम जपाय ॥

हमें पद-पद पर भले विपत्तियाँ आयें, आती रहें क्योंकि विपत्ति में ही निश्चित रूप से प्रभु के दर्शन हुआ करते हैं और दर्शन हो जाने पर फिर जन्म-मृत्यु के चक्र में नहीं जाना पड़ता है।

स्वामी रामतीर्थ कहा करते थे : ''हे प्रभु ! मुझे अपने मित्रों से बचाओ और सुख-सुविधाओं से बचाओ।''

सुख हमारा समय हड़प कर लेता है और जगत में सत्यबुद्धि कराता है। मित्र हमारा समय खा जाते हैं और जगत में आसक्ति करा देते हैं।

यह सुनकर एक बार उनके शिष्य पूरणसिंह ने कहा : ''गुरुजी ! यह आप क्या कह रहे हैं ? शत्रुओं से और विपत्तियों से बचाओ ऐसी प्रार्थना की जाती है और आप कहते हैं कि मित्रों से बचाओ !''

रामतीर्थ ने कहा : ''मैं गलती से प्रार्थना नहीं कर रहा हूँ... ठीक ही कर रहा हूँ। सुख हमारा समय हड़प कर लेता है और जगत में सत्यबुद्धि कराता है। मित्र हमारा समय खा जाते हैं और जगत में आसक्ति करा देते हैं। जब-जब मन फँसता है तो मित्र में फँसता है, सुख में फँसता है। शत्रु और दुःख में क्या फँसेगा ? इसलिए मैं मित्रों और सुख-सुविधाओं से बचने के लिए ही प्रभु से प्रार्थना कर रहा हूँ।''

भगवान का भक्त कभी अज्ञानी नहीं होता और ज्ञानी कभी अभक्त नहीं रह सकता।

एक महात्मा थे। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा : ''जब हम संसार से जायेंगे तब मंदिर के घंट बजेंगे। घंट बजें तो समझ लेना कि हम ठीक जगह पर पहुँचे हैं।''

महात्मा भजनानंदी थे। उनके बगीचे में आम के वृक्ष थे और आम का मौसम भी चल रहा था। समय पाकर महात्माजी के प्राण तो निकल गये किन्तु घंट नहीं बजे। शिष्यों को हुआ कि 'गुरुजी ठीक जगह पर नहीं पहुँचे क्या ?' उन्होंने जाकर दूसरे महात्मा से पूछा :

''हमारे गुरुजी ने लीला तो समाप्त कर दी। उनके जाने के बाद घंट बजनेवाले थे किन्तु नहीं बजे। इसका क्या कारण है ?''

अपनी तरफ से मोह-ममता का पाश काट सको तो ठीक है, नहीं तो भगवान से प्रार्थना करो कि वे ही कृपा करके यह पाश काट दें। सच्चे हृदय की प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती।

उन महात्मा ने ध्यान करके देखा तो उन्हें पता चला कि जाते-जाते महात्मा के मन में आ गया था कि आम बहुत बढ़िया है... पका हुआ है। जाते-जाते चित्तवृत्ति आम में पहुँच गयी थी। महात्मा ने वह आम तुड़वाया और उसमें जो कीड़ा था उसे दबाया तो घंट बजने लगे।

जहाँ-जहाँ हमारी आसक्ति होती है वहाँ-वहाँ सूक्ष्म शरीर अटक सकता है। इसीलिए कुंतीजी कहती हैं कि हमें विपत्तियाँ दो ताकि उसमें हमारी आसक्ति न हो और आपमें हमारी प्रीति बनी रहे।

आप विपत्ति माँगो ऐसा मेरा आग्रह नहीं है लेकिन मैं यह प्रार्थना अवश्य करूँगा कि आप संपत्ति-विपत्ति कुछ न माँगो। माँगो तो ऐसा माँगो कि 'तुझसे तुझीको माँगते हैं, प्रभु ! तुझसे तेरे स्वरूप का ज्ञान माँगते हैं... तुझसे तेरी प्रीति माँगते हैं, बस।'

जिसमें प्रीति हो जाती है उसका ज्ञान भी सहज हो जाता है और भगवान के स्वरूप का ज्ञान हो जाये तब भी प्रीति सहज हो जाती है। क्योंकि भगवान इतने महान् हैं, उनकी महिमा इतनी अपरंपार है कि उनका ज्ञान होते ही उनमें प्रीति हो जाती है और उनमें प्रीति होने पर उनके स्वरूप का ज्ञान भी सहज ही उभरने लगता है। भगवान का भक्त कभी अज्ञानी नहीं होता और ज्ञानी कभी अभक्त नहीं रह सकता।

कुछ लोग भक्तिमार्गवालों की आलोचना करते हैं कि 'अरे ! ये तो द्वैतवादी हैं... भगत हैं...' और कुछ लोग ज्ञानी की बात काटते रहते हैं। अपूर्ण ज्ञानी भक्त की बात काटेगा और अपूर्ण भक्त ज्ञानी की बात काटेगा लेकिन जो पूर्ण भक्तिभाव के द्वारा या पूर्ण ज्ञान के द्वारा पूर्णता को पहुँचे हैं वे तो एक-दूसरे का पोषण

करेंगे, एक-दूसरे में अपने स्वरूप को देखेंगे, एक-दूसरे से स्नेह करेंगे।

भक्तिमार्ग की निष्ठा हो, चाहे योगमार्ग की निष्ठा हो, चाहे ज्ञानमार्ग की निष्ठा हो... निष्ठा काम आयेगी। अपने भगवत्स्वभाव में निष्ठा हो जाये तो बाकी का कार्य आसान हो जायेगा।

कुंतीजी कहती हैं : 'हे केशव ! पाण्डवों के प्रति, यदुवंशियों के प्रति मेरा जो स्नेहपाश दृढ़ हो रहा है उसे काटने की कृपा करो।'

अपनी तरफ से मोह-ममता का पाश काट सको तो ठीक है, नहीं तो भगवान से प्रार्थना करो कि वे ही कृपा करके यह पाश काट दें। सच्चे हृदय की प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती।

सच्चे हृदय की प्रार्थना
जब भक्त सच्चा गाय है।
भक्तवत्सल के कान में
वह पहुँच झट ही जाय है॥

हम अपने बलबूते से प्रयत्न तो करें लेकिन करोड़ों जन्मों के हमारे मोह-ममता के संस्कार जल्दी नहीं मिटते इसलिए भगवत्कृपा आवश्यक है और केवल उसकी कृपा के भरोसे बैठे रहें और प्रयत्न न करें तो यह भी बेईमानी होगी। अपनी ओर से प्रयत्न करें और उसकी कृपा हो तभी काम बनता है। जैसे, किसान अपना प्रयत्न करता है और सूर्यनारायण की कृपा होती है तो धान्य पैदा होता है। सूर्यनारायण का प्रकाश तो आ रहा है, बारिश भी हो रही है लेकिन किसान प्रयत्न न करे तब भी खेती नहीं होगी और किसान प्रयत्न करे किन्तु बारिश न हो तब भी खेती नहीं होगी। अतः दोनों जरूरी हैं।

अपने बलबूते से कोई सद्गुण आ गया तो ज्यादा देर नहीं टिकेगा क्योंकि 'मैं सद्गुणी हूँ... मैं चोरी नहीं करता... मैं दारू नहीं पीता...' ऐसा अभिमान कब गिरा दे कोई पता नहीं। ऐसे ही अपने को दुर्गुणी मानना भी उचित नहीं वरन् 'दुर्गुण मन में है, बुद्धि में है, शरीर में है...' ऐसा मानकर उन्हें दूर करने का प्रयास करो। अगर नहीं निकलते तो प्रभु से प्रार्थना करो... प्रार्थना अवश्य रंग लायेगी। फिर तुम्हारा प्रयास और प्रभु की कृपा दोनों मिलकर दुर्गुणों को दूर करने में देर न करेंगी।

एक संन्यासी पिक्चर की लाइन में खड़ा था। दोपहर का समय था। किसी भक्त ने देख लिया तब संन्यासी चौंका : 'अरे ! मैं तो कथा करता हूँ... लोग इतना पूजते हैं और मैं थियेटर में खड़ा हूँ ? संन्यासी होकर, भक्त होकर इन भोगी-विलासियों की कतार में ? नहीं नहीं।'

झाड़ फेंका वासना को और लाइन से बाहर निकल गया। ऐसे ही मन जब नीचे की ओर जाने लगे तब उसे फटकार देना कि 'मैं साधक हूँ तो ऐसा काम कैसे कर सकता हूँ ?' ऐसा करने से मन की दुष्प्रवृत्तियाँ रुक जायेंगी और वह सत्प्रवृत्तियों की ओर चल पड़ेगा। अगर फिर भी मन न रुके तो प्रभु से प्रार्थना करें तो मन की दुष्प्रवृत्तियों को रोकने में मदद मिलेगी और मन सहज ही सत्प्रवृत्तियों में लगकर परमात्मप्राप्ति के योग्य हो जायेगा।

ध्यान के सहायक बारह योग

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

योग में अपार बल है। योग के नियमों का पालन करते हुए यदि दृढ़तापूर्वक साधना की जाये तो योगी अद्‌भुत सामर्थ्य से युक्त हो जाता है। इसी योग के बल से महर्षि अगस्त्य पूरे सागर को एक चुल्लू में पी गये थे। योग के बल से ही महर्षि विश्वामित्र नयी सृष्टि की रचना करने में काफी अंश तक सफल हुए थे और योग के बल से ही भगवान वेदव्यास ने कर्ण, दुर्योधनादि कई योद्धाओं को परलोक से बुलवाकर उनके स्नेहियों से मिलवाया, बातचीत करवायी तथा पुन: परलोक भेज दिया था।

योग के नियमों का पालन करते हुए यदि दृढ़तापूर्वक साधना की जाये तो योगी अद्‌भुत सामर्थ्य से युक्त हो जाता है।

महाभारत के शांति पर्व के मोक्षधर्म पर्व में ध्यान के सहायक योगों का वर्णन आता है :

'ध्यानयोग की साधना करनेवाले मुनि को चाहिए कि वह हृदय के रागादि दोषों को दूर कर, पापों से मुक्त हो योग में सहायता पहुँचानेवाले देश, कर्म, अनुराग, अर्थ, उपाय, अपाय, निश्चय, चक्षुष, आहार, संहार, मन और दर्शन- इन बारह उपायों का आश्रय ले।'

१. देशयोग : ध्यानयोग के साधक को ऐसे स्थान पर आसन लगाना चाहिए जो समतल और पवित्र हो। जो नेत्रों को भला मालूम हो तथा जहाँ मन लग सके और हवा का जोर न हो। गुफा या ऐसा ही कोई एकांतस्थान ही ध्यान के लिए उपयोगी होता है। ऐसे स्थान पर आसन लगाने को देशयोग कहते हैं।

रेडियो बज रहा हो, टी.वी. चल रहा हो, दुनियाभर की बातें हो रही हों... अगर ऐसे स्थान पर ध्यान करने बैठोगे तो मन नहीं लगेगा। अत: अपने घर में एक कमरा ऐसा रखो जहाँ केवल जप-ध्यान-स्वाध्याय ही हो।

अगर अलग कमरे की सुविधा न हो सके तो कमरे के किसी एक कोने को ही जप-ध्यान के लिए सुरक्षित रखो। उस कमरे या जगह पर कोई भी सांसारिक काम या बातचीत न हो इसका ध्यान रखो। कमरे में ताजे पुष्प रखो एवं धूप-दीप से उसे सुवासित रखो। कमरे में शुद्ध वायु का आवागमन होता रहे इस बात का ध्यान रखो। तुम्हारा आसन भी ऐसा हो जो विद्युत का अवाहक हो। हो सके तो कंबल का आसन प्रयोग करो।

इस प्रकार उचित स्थान पर साधना के नियमों का पालन करते हुए तुम थोड़ी भी साधना करोगे तो तुम्हारे अंदर एक प्रकार की विद्युत (ऊर्जा) पैदा होगी जो वात, पित्त और कफ के दोषों को दूर करके शरीर को नीरोग और मन को प्रसन्न रखने में सहायक होगी।

कई लोग साधना-भजन तो करते हैं किन्तु उससे उत्पन्न ऊर्जा को सँभाल रखने की परवाह नहीं करते। इसलिए वर्षों तक साधन-भजन करने के बावजूद भी उसका कोई ठोस परिणाम नहीं मिल पाता है।

कई लोग ऐसे होते हैं जो साधन-भजन तो करते हैं किन्तु उससे उत्पन्न ऊर्जा को सँभाल कर रखने की परवाह नहीं करते। बिना आसन के बैठने से, नंगे पैर घूमने से वह आध्यात्मिक ऊर्जा बिखर जाती है और जो धारणाशक्ति पैदा होनी चाहिए वह नहीं हो पाती है। इसलिए वर्षों तक साधन-भजन करने के बावजूद भी उसका कोई ठोस परिणाम नहीं मिल पाता है। अत: साधक को चाहिए कि इन बातों का खूब ख्याल रखे। जप-ध्यान भी आसन पर बैठकर ही करे। उचित देश में उचित

आसन पर जो ध्यान-समाधि का अभ्यास किया जाता है यही देशयोग है।

२. कर्मयोग : आहार, विहार, चेष्टा, सोना और जागना ये सब परिमित और नियमानुकूल होना चाहिए। यही कर्म नामक योग है। जो भी चेष्टा करें, जो भी कर्म करें वे योग के पोषक होने चाहिए न कि योग को बिखेरनेवाले। ध्यानयोग के द्वारा जो भी अनुभव हो उसे यत्र-तत्र प्रकाशित न करें और न ही प्रलोभनादि में फँसें।

जो भी चेष्टा करें, जो भी कर्म करें वे योग के पोषक होने चाहिए न कि योग को बिखेरनेवाले।

ध्यान के साधक को कई बार अद्भुत प्रकाश दिखता है। कभी अपने को आकाश में उड़ता हुआ देखता है तो कभी-कभी जो होनेवाला है उसकी स्फुरणा हो जाती है। इस प्रकार साधक को अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार अलग-अलग ढंग से अनुभव होते रहते हैं।

भगवान में प्रीति नहीं है इसलिए सारी मुसीबतें आती हैं।

एक बार अमदावाद के आश्रम के मौनमंदिर में एक मामलतदार बैठा था। साधना के दौरान् उसके पास तीन बार अप्सरा आई थी। दो बार तो रूप-लावण्य से सज-धजकर उसे आकर्षित करने आई थी लेकिन उसको समझा रखा था कि 'यह सब होगा किन्तु तुम फँसना नहीं।' तीसरी बार आकर वह कुर्सी पर बैठी। उस वक्त उसके शरीर पर केवल चमड़ा न था बाकी का सब मसाला दिखे, ऐसी हालत में थी। वह साधक से कहने लगी : 'फँसता तो यही था इस शरीर में।' ऐसा कहकर वह अंतर्धान हो गई। यह सब संभव है।

ऐसे अनुभव हमें भी हों ऐसी इच्छा न करें और यह नहीं हो सकता ऐसी शंका भी न करें। आप केवल लगे रहें तो इससे भी ऊँचे अनुभव हो सकते हैं।

गुरु, वेद एवं शास्त्रों के वचनों में विश्वास रखकर उनमें डट जायें, शंका न लायें एवं अडिग होकर निश्चयपूर्वक लग जायें। इसका नाम है निश्चय योग।

३. अनुराग योग : तीसरा योग है अनुराग योग। भगवान में प्रीति हो। भगवान में, भगवान की प्राप्ति के साधन जप, ध्यान, सत्संग में प्रीति हो, भगवान के गुण-महिमा सुनने में प्रीति हो इसे कहते हैं अनुराग योग। सतत भगवन्नाम जप करने से भगवान में प्रीति होगी। भगवान में अनुराग होगा तो काम-विकार शांत हो जाएगा। लोभ, मोह, मद, मत्सर, अहंकार आदि दुर्गुण दूर हो जाएँगे। भगवान में प्रीति नहीं है इसलिए सारी मुसीबतें आती हैं।

भूल्या जभी आपनूं तभी होया खराब।

अगर यह अनुराग योग मिल गया तो बाकी के तमाम विघ्न पर तुम सहजता से विजय पा सकोगे और योग में सफलता मिल जाएगी। प्रकृति के ऐसे-ऐसे रहस्य खुलने लगेंगे कि तुम ताज्जुब करोगे कि 'आज तक हम कहाँ भटक रहे थे ?' ऐसा है अनुराग योग।

४. अर्थयोग : योग की साधना के दौरान केवल अति आवश्यक सामग्री साथ में रखें जैसे भर्तृहरि रखते थे, गोपीचंद रखते थे। अति आवश्यक सामग्री के अलावा कुछ न रखें। दुनिया का प्रपंच न बढ़ायें। बिनजरूरी विस्तार न करें। अगर हाथ में खा सकते हो तो थाली क्यों रखना ?

मैं जब साधना करता था तब एक पतीली रखता था। उसमें मूँग व सब्जी डाल देता था। जितनी देर में वह उबलता था उतने समय में मैं आसन-नियम कर लेता था। फिर उसी पतीली में खाकर पतीली को माँजकर रख देता था। बीस मिनट में तो मामला सफा कर देता था। ये आप लोग इतना 'साँई-साँई' कर रहे हो, इतना आनंद सबको मिल रहा है तो इसके पीछे गुरुओं की आज्ञा और साधना में उतना समय दिया है उसीका परिणाम है।

साधना-काल में केवल आवश्यक सामग्री रखें और कोई रिश्ते न बढ़ायें। इसे कहते हैं अर्थयोग।

५. उपाय योग : ध्यान के लिये उपयुक्त आसन

में बैठना... इसका नाम है उपाय योग। जब बैठें तब पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में कमर सीधी रखकर बैठें। जिस आसन में ध्यान में अनुकूलता आती हो उसीमें बैठना यह है उपाय योग।

६. अपाय योग : संसार के विषयों और सगे-संबंधियों से आसक्ति तथा ममता हटाने का प्रयत्न करना... यह है अपाय योग। 'ईश्वर की ओर' जैसी पुस्तक, 'योगवाशिष्ठ महारामायण' ग्रंथ का वैराग्य प्रकरण आदि बार-बार पढ़ने से और विचारने से अपाय योग में सफलता मिल सकती है।

ईश्वर के गुप्त रहस्यों का अमूल्य खजाना पाना है' यह सोचकर तुच्छ चीजों की ओर से मन को हटा लेना है।

७. निश्चय योग : गुरु, वेद एवं शास्त्रों के वचनों में विश्वास रखकर उनमें डट जायें, शंका न लायें एवं अडिग होकर निश्चयपूर्वक लग जायें। इसका नाम है निश्चय योग।

८. चक्षुर्योग : साधना के दिनों में आँखें आदि इन्द्रियों को इधर-उधर भटकने न देकर वश में रखना... इसका नाम है चक्षुर्योग। इधर-उधर न देखकर दृष्टि को नासिका के अग्रभाग में रखने से, चलते-फिरते भी दृष्टि नासाग्र रखने से फालतू कचरा, फालतू दृश्य आँख के द्वारा भीतर नहीं घुसेंगे और धारणा-ध्यान में मदद मिलेगी।

९. आहार योग : शुद्ध, सात्त्विक भोजन का नाम है आहार योग। योग में पोषक आहार लेना चाहिये। 'क्या करें ? नास्ते में देरी है। जरा चाय पी लें... चाट खा लें... ब्रेड खा लें... जरा फाफड़ा खा लें...' आदि। इससे तुम्हारा कितना घाटा हो जाता है इसका तुमको पता तक नहीं है। इसलिए सावधानी रखें। संयमपूर्वक उचित मात्रा में उचित आहार लेना यही आहार योग है।

जिसने आत्मसिद्धि पा ली, अपने आत्मा का ज्ञान पा लिया उसने अपना काम बना लिया।

१०. संहार योग : विषयों की ओर खींचनेवाली मन-इन्द्रियों की स्वाभाविक प्रवृत्ति को रोकना संहार योग कहलाता है। संसार के आकर्षणों को हटाकर अपने मन को ईश्वर में ही लगाने का प्रयत्न करें। 'ईश्वर के गुप्त रहस्यों का अमूल्य खजाना पाना है' यह सोचकर तुच्छ चीजों की ओर से मन को हटा लेना... यही है संहार योग।

११. मनोयोग : मन को संकल्प-विकल्प से रहित करने का, एकाग्र करने का प्रयत्न करना मनोयोग है। इष्ट अथवा गुरु के चित्र को आँखों की सीध में रखकर आँख की पुतली न हिले इस तरह एकटक देखते रहें। फिर आँख बंद करके उस चित्र को देखें। अजपाजाप करके धारणा करें। जहाँ-जहाँ मन जाता हो वहाँ-वहाँ से हटाकर उसे गुरु में, ईश्वर में लगाने का यत्न करें इसे कहते हैं मनोयोग। ज्यों-ज्यों पूर्व के साधन करते जाओगे त्यों-त्यों मनोयोग सहज होने लगेगा और ज्यों-ज्यों मनोयोग होता जाएगा त्यों-त्यों योग में सफलता आसानी से मिलती जाएगी।

१२. दर्शन योग : जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि के समय जो महान् दुःख होता है उस पर विचार करके संसार से विरक्त होने का नाम दर्शन योग है।

जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्।

इनका विचार करके विवेक बढ़ा दें तो दर्शनयोग में सफलता मिल जाएगी। जन्म का दुःख, मृत्यु का दुःख, व्याधि का दुःख, बुढ़ापे का दुःख, इसके अलावा भी दुनिया में और कितने ही दुःख हैं। पल का भी पता नहीं है कि क्या होगा। जिस प्रकार कीड़ा बहती जलधारा में एक भँवर से दूसरे भँवर में, एक तरंग से दूसरे तरंग में थपेड़े खाते-खाते भटकता हुआ मर जाता है वैसे ही जीव को इस संसार में एक जन्म से दूसरे जन्म में, एक योनि से दूसरी योनि में भटकना पड़ता है। आखिर जब मनुष्य जन्म मिलता है तब भी वह एक जिम्मेदारी से दूसरी जिम्मेदारी, एक वासना से दूसरी वासना... ऐसे ही जिम्मेदारी के, वासना के थपेड़े खाते-खाते मर जाता है।

(शेष पृष्ठ २५ पर)

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

गुरुसेवा की महिमा

राजा दिलीप को कोई संतान नहीं थी। वे गये गुरु वशिष्ठजी के चरणों में और प्रार्थना की : ''ऐसा कोई उपाय बतायें जिससे मैं संतानप्राप्ति कर सकूँ।''

तब गुरुवर वशिष्ठजी ने कहा : ''राजन् ! नंदिनी गाय की सेवा करो। अगर उसकी सेवा से उसे संतुष्ट कर सको तो काम बन जायेगा।''

गुरुवर की आज्ञा को शिरोधार्य करके राजा दिलीप नंदिनी की सेवा करने लगे। वे उसे चराने के लिए रोज जंगल में ले जाते। सेवा करते-करते राजा को बहुत समय बीत गया।

एक दिन जब राजा दिलीप नंदिनी को चराने ले गये तब जंगल में एक सिंह प्रगट हुआ और उसने नंदिनी के मस्तक पर अपना पंजा रख दिया। यह देखकर दिलीप बोल उठे :

''रुको... रुको... हे वनकेसरी ! गाय को क्यों मारते हो ?''

सिंह : ''यह तो मेरा आहार है।''

दिलीप : ''यह तुम्हारा आहार नहीं, मेरे गुरुदेव की गाय है। मैं इसका सेवक हूँ। जब तक सेवक जीवित हो तब तक सेव्य कष्ट नहीं पा सकता। मैं गाय चराने के लिये आया हूँ, इसकी सेवा करने आया हूँ। इसकी रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है। अगर तुम्हें भूख ही लगी हो तो मेरा आहार कर लो लेकिन नंदिनी पर प्रहार मत करो।''

''यह तुम्हारा आहार नहीं, मेरे गुरुदेव की गाय है। इसकी रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है। अगर तुम्हें भूख ही लगी हो तो मेरा आहार कर लो लेकिन नंदिनी पर प्रहार मत करो।''

राजा की निष्ठा देखकर सिंह के वेश में छुपे हुए गुरुवर वशिष्ठ कहते हैं : ''मानवदेह बड़ी मूल्यवान है। पशु तो आता-जाता है। उसका उपयोग करना होता है। मानव के लिए पशु है, पशु के लिए मानव नहीं।''

दिलीप : ''आपकी यह बात आपके ही पास रहे। मनुष्य अगर मानवता छोड़ दे तो वह पशु से भी बदतर है। मेरा कर्त्तव्य है इसकी सेवा करना। अतः मुझे अपने कर्त्तव्य में ही लगे रहने दो, वनकेसरी !''

राजा की अटूट निष्ठा देखकर वशिष्ठजी महाराज अपने असलीरूप में प्रगट हो गये और बोले :

''पुत्रवान् भव राजन् ! तेजस्वी भव । यशस्वी भव, राजन् !''

समय पाकर राजा दिलीप के यहाँ संतान का जन्म हुआ जो राजा रघु के नाम से प्रख्यात हुए और इन्हीं के नाम पर कुल का नाम पड़ा रघुकुल। इसी कुल में आगे चलकर मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का अवतरण हुआ है। कैसी है महत्ता गुरुआज्ञापालन की और कैसी है महिमा गुरुसेवा की !

*

श्राप भी वरदान !

एक बार माता पार्वती ने भगवान सदाशिव से कहा : ''नाथ ! आप अपना कोई उत्तम भक्त मुझे दिखाइये।''

शिवजी : ''चलो।''

शिव-पार्वती ने ब्राह्मण-ब्राह्मणी का रूप धारण किया और चल पड़े। चलते-चलते दोनों पहुँचे किसी भक्त के घर और बोले : ''भाई ! तुम तो भक्तराज हो। खाने के लिए रोटी का टुकड़ा मिल सकता है क्या ?''

''रोटी का टुकड़ा ही क्यों ? भूदेव ! मेरे पास

बकरियाँ हैं। मैं अभी उनके दूध की खीर बनवाकर खिलाता हूँ। आप तनिक विश्राम कीजिये।''

भक्त गया भीतर और पत्नी से पूछने लगा तब पत्नी ने कहा :

''ये तो अतिथिदेव हैं। नाथ ! इनका सत्कार करना तो हमारा धर्म है। आप पूछते क्यों हैं ? ब्राह्मण-ब्राह्मणी आये हैं तो मुझे खीर बनाने में संकोच क्यों होगा ? अभी बनाती हूँ।''

उसने बड़े प्रेम से खीर-पूरी खिलायी। शिव-पार्वती खूब प्रसन्न हुए और शिवजी ने आशीर्वाद दे दिया : ''तुम्हारी सारी बकरियाँ मर जायें और बकरी दोहनेवाली भी चली जाये।''

उसने बड़े प्रेम से खीर-पूरी आदि बनायीं और अतिथियों को खिलायी। खाकर ब्राह्मण-ब्राह्मणी बने शिव-पार्वती खूब प्रसन्न हुए और शिवजी ने आशीर्वाद दे दिया :

''तुम्हारी सारी बकरियाँ मर जायें और बकरी दोहनेवाली भी चली जाये।''

माता पार्वती उस समय तो मौन रहीं किन्तु कुछ आगे जाने पर बोलीं :

''हमने उस भक्त के घर भोजन किया और आपने उसे आशीर्वाद देने के बजाय श्राप दे डाला और वह भक्त भी कैसा कि उसके चेहरे पर शिकन तक न पड़ी ?''

''सुनो पार्वती ! हम पुनः उसके घर चलेंगे। किन्तु अभी नहीं, कुछ समय के बाद।''

समय बीता। पुनः घूमते-घामते शिव-पार्वती ब्राह्मण-ब्राह्मणी के रूप में उस भक्त के घर पहुँचे और बोले : ''क्यों भक्तराज ! पिछली बार तो खीर-पूरी खिलायी थी... अबकी बार तुम्हारी बकरियाँ कहाँ गयीं ?''

''महाराज ! आपकी कृपा हो गयी। जिन बकरियों का दूध आपने स्वीकार किया था वे मरकर पशुयोनि से छूट गयीं और मुक्ति के रास्ते गयी होंगी। जो बकरियाँ दोह-दोहकर अपना जीवन घसीट रही थी वह भी आपके आशीर्वाद से उन्नत जीवन की ओर गयी होगी। फिर मैं भी इधर-उधर क्यों भटकूँ ? उन्नत जीवन जिससे होता है उस परमात्मा का ध्यान लगाता हूँ। अब तो बड़ा आनंद आता है महाराज ! बकरियाँ थीं तो गृहस्थ धर्म निभाना पड़ता था। अब तो हम हो गये फक्कड़। कोई दे जाता है तो टुकड़ा पा लेते हैं, नहीं तो टिक्कड़ बना कर खा लेते हैं। आपको चाहिए तो फलाने-फलाने घर से भिक्षा ले आइए, नहीं तो मैं ले आऊँ ?''

शिवजी : ''नहीं नहीं, उसकी अब कोई जरूरत नहीं। लोगों को भले वह श्राप लगा था किन्तु तूने उसे भी वरदान माना। दुनिया जिनके लिये तड़पती है वे ही शिव और पार्वती स्वयं तेरे दर पर आये हैं।''

इतना कहते हुए शिव-पार्वती अपने असली स्वरूप में प्रगट हो गये। भक्त उनके दर्शन कर निहाल हो गया।

धन्य है उन भक्तों को जो अपने प्रेमास्पद के द्वारा दिये श्राप को भी वरदान के रूप में स्वीकार करते हैं...

*

तुलसी की महिमा

राजस्थान में जयपुर के पास एक इलाका है लदाणा। लदाणा एक छोटी-सी रियासत थी। उसका राजा शाम के समय बैठा हुआ था। उसी समय उसका एक मुसलमान नौकर किसी काम से वहाँ आया। तब राजा की नजर अचानक ही उसके गले पर पड़ी तो देखता है कि मुसलमान के गले में तुलसी की माला ! राजा ने पूछा :

''क्या बात है ? क्या तू हिन्दू बन गया है ?''

''नहीं, हिन्दू नहीं बना हूँ।''

''तो फिर तुलसी की माला क्यों डाल रखी है ?'

''राजा साहब ! तुलसी की माला की बड़ी महिमा है।''

''क्या महिमा है ?''

''राजा साहब ! मैं आपको एक सत्य घटना सुनाता हूँ :

एक बार मैं अपने ननिहाल जा रहा था। सूरज

ढल रहा था। इतने में मुझे दो छाया-पुरुष दिखाई दिये जिनको हिन्दू लोग यमदूत बोलते हैं। उनकी डरावनी आकृति देखकर मैं घबरा गया। तब उन्होंने कहा :

'तेरी मौत नहीं है। अभी एक युवक किसान बैलगाड़ी भगाता-भगाता आयेगा और यह जो गड्ढा है उसमें उसकी बैलगाड़ी का पहिया फँसेगा और बैलों के कंधे पर जो जुआ है वह टूट जायगा। बैलों को प्रेरित करके हम उद्दण्ड बनायेंगे तब उसमें से जो दायीं ओर का बैल होगा वह विशेष उद्दण्ड होकर युवक किसान के पेट में अपना सींग घुसा देगा और इसी निमित्त से उसकी मृत्यु हो जायेगी। हम उसकी जीवात्मा लेने के लिये ही आये हैं।'

धन्य है उन भक्तों को जो अपने प्रेमास्पद के द्वारा दिये श्राप को भी वरदान के रूप में स्वीकार करते हैं...

राजा साहब ! मैं खुदा की कसम खाकर बोलता हूँ। मैंने उन यमदूतों से हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि 'यह घटना देखने की मुझे इजाजत मिल जाये। यह दास छुपकर खड़ा होकर घटना देख सके यह आज्ञा मिल जाये।'

उन्होंने इजाजत दे दी और मैं दूर खड़ा होकर, एक पेड़ के पीछे से सारी घटना देखने लगा। थोड़ी देर में उस कच्चे रास्ते से बैलगाड़ी दौड़ती हुई आयी और जैसा उन्होंने कहा था ठीक वैसे ही बैलगाड़ी को झटका लगा, बैल उत्तेजित हुए, युवक किसान उन पर नियंत्रण पाने में असफल रहा और बैल उसे धक्का मारते-मारते दूर ले गये और बुरी तरह से उसके पेट में सींग घुसेड़ दिया। ऐसा ही उसका निमित्त था, अतः वह मर गया।''

राजा : ''फिर क्या हुआ ?''

नौकर : ''राजन् ! लड़के की मृत्यु के बाद मैं पेड़ की ओट से बाहर आया और देखने लगा कि उस लड़के की रूह (जीवात्मा) कैसी है ?

मैंने उन दूतों से पूछा :

'इसकी रूह (जीवात्मा) कहाँ है, कैसी है ?'

उन्होंने कहा : 'यह जीव हमारे हाथ में नहीं आया। मृत्यु तो इसकी इसी निमित्त से थी, सो तो हो गयी लेकिन बैल ने ज्यादा धक्का-मुक्की की और जहाँ पर उसकी मृत्यु हुई वहाँ तुलसी का पौधा था। जहाँ तुलसी होती है वहाँ मृत्यु होने पर जीव भगवान श्रीहरि के धाम में जाता है। भगवान के पार्षद आकर उसे ले जाते हैं।'

राजन् ! तबसे मुझे ऐसा हुआ कि मरने के बाद मैं बिस्त में जाऊँगा कि दोजख में यह मुझे पता नहीं। इसलिए तुलसी की माला तो पहन लूँ ताकि कम-से-कम आपके भगवान नारायण के धाम में जाने का तो मौका मिल ही जायेगा और तभी से मैं तुलसी की माला पहनने लगा।''

रुद्राक्ष की माला की भी ज्ञान-उपासकों के लिये ऐसी ही महिमा है।

कैसी दिव्य महिमा है तुलसी की ! इसीलिए हिन्दुओं में किसीका अंत समय जानकर उसके मुख में तुलसी का पत्ता और गंगाजल डाला जाता है ताकि जीव की सद्‌गति हो और वह परमेश्वर की ओर की यात्रा में अग्रसर हो सके।

*

(पृष्ठ ४ का शेष)

और प्रशंसा से फूल जाओगे। 'निंदा-प्रशंसा तो स्वप्न है। अंतर में जो छुपा है वही आत्मा सार है' - इस प्रकार के भाव दृढ़ रखोगे तो संकल्प-विकल्प शांत होते जाएँगे और परमात्म-तत्त्व की शक्ति तुम्हारे अंदर प्रगट होती जाएगी। यही वास्तविक विजय है।

किसी बाह्य शत्रु को पराजित करना यह सामाजिक विजय है। बाह्य वस्तुएँ उपलब्ध हो जाना यह सामाजिक सफलता है। बाहर के जितने भी शत्रु हों उनकी पराजय हो जाये, बाहर की तमाम सुख-सुविधा, पद-प्रतिष्ठा उपलब्ध हो जाये फिर भी जब तक मानव ने अपनी कल्पनाओं पर विजय नहीं पाई तब तक वह विजयी नहीं माना जाएगा, सफल नहीं माना जाएगा। कल्पनाओं से पार कल्पनाओं का जो आधार है उसे जान लेना ही वास्तविक विजय है। उसके लिये किया जानेवाला पुरुषार्थ ही वास्तविक पुरुषार्थ है।

त्यागपत्र

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

''मेरे पतिदेव गुरु की आज्ञा शिरोधार्य करके आनंदपुर के किले में उनके सान्निध्य में हैं। अभी तो वहाँ खूनी जंग खेला जा रहा है। औरंगजेब की सागर जैसी विशाल सेना ने किले को चारों ओर से अजगर की तरह लपेट में ले लिया है। किले में तो सिर्फ मुट्ठीभर सिक्ख ही हैं।''

''अरे ! अपने इकलौते बाल-बच्चेवाले पुत्र को धर्म की रक्षा के लिये मैंने गुरु के चरणों में सौंप दिया है। वह भी आनंदपुर के किले में है। धर्मयुद्ध के लिये घर से प्रयाण करते समय, रण की ओर जाने के विकट विदाई के समय मैंने उससे कहा था कि 'बेटा ! हारकर वापस आया तो जीवनभर मुझे अपना मुँह मत दिखाना। अपनी बहन-बेटियों की इज्जत खतरे में है। अपने धर्म पर बड़ा संकट आ पड़ा है। देश की रक्षा के लिये मर मिटना ही धर्म है। सिक्ख जनेता कायर बच्चों को जन्म नहीं देती है। देश की खातिर मर-मिटने की तमन्नावाले वीरों से ही आज तक उसकी कोख उज्ज्वल रही है। यह देह तो नाशवंत है। एक दिन इसे जला देना है। उसमें मोह क्या रखना ? जरूरत पड़े तो इस धर्मयुद्ध में प्राणों की आहुति देकर भी मेरी कोख की लाज रखना। पुत्र ! इससे तू वीरगति को प्राप्त होगा। तेरे जन्म-मरण के फेरे मिट जाएँगे। तेरा अमर आत्मा विश्वेश्वर के प्रकाश में मिल जाएगा।''

''अरे बहन ! मेरा भाई भी आनंदपुर के दुर्ग में ही है। मैंने विदा के समय उसकी कलाई पर रक्षा का धागा बाँधते हुए कहा था कि 'मेरे भाई ! धर्म की रक्षा की खातिर खून का कतरा-कतरा बहा देना पड़े तो झिझकना मत। धर्म सुरक्षित होगा तो सब कुछ होगा।''

सिक्ख स्त्रियाँ पनघट पर इकट्ठी होकर आपस में ये बातें कर रही थीं। उधर आनंदपुर के किले के भीतर रहकर थोड़े-से सिक्ख मुगल सेना को रोक रहे थे। उनमें इन स्त्रियों के स्वजन भी थे। किसीका पति, किसीका भाई तो किसीका लाड़ला बेटा आनंदपुर की रक्षा के लिये तैनात था। 'अलख निरंजन' और 'सत् श्री अकाल' के गगनभेदी नारों से आनंदपुर का दुर्ग गूँज रहा था।

> *''नहीं गुरुजी ! हम युद्ध में जाने की बात नहीं करते हैं। हम तो आपके पास घर जाने के लिये इजाजत माँगने आये हैं।''*

दक्षिण में शिवाजी महाराज ने और पंजाब में गुरु गोविंदसिंह ने औरंगजेब की सत्ता का सूर्य अस्ताचल पर पहुँचा दिया था। इससे खफा होकर औरंगजेब ने चारों ओर जुल्म का साम्राज्य जमा दिया। गोरिल्ला व्यूह से लड़ाई लड़नेवाले मराठा सैन्य के सामने औरंगजेब की सैन्यशक्ति का बहुत दुर्व्यय होता था इसलिए उसने पहले सिक्खों को परास्त करना चाहा। सिक्खों में वीरता का मंत्र फूँकनेवाले गुरु गोविंदसिंह को हथियाने से, जैसे बिना मूल के वृक्ष धराशायी हो जाते हैं उसी तरह सिक्ख धर्म भी समूल नष्ट हो जाएगा- ऐसी धारणा से औरंगजेब ने आनंदपुर के किले में निवास कर रहे गुरु गोविंदसिंह पर घेरा डालने के लिए एक लाख सैनिकों की विशाल फौज भेजी थी। सागर की उछलती तरंगों की तरह मुगल सेना बार-बार दुर्ग पर धावा बोल रही थी लेकिन वज्र के समान चट्टान के साथ टकराकर जैसे उछलती तरंगें छिन्न-भिन्न हो जाती हैं उसी तरह मुगल सेना छिन्न-भिन्न

> *''मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूँ- ऐसा त्यागपत्र तुम सब लिखकर दे दो। फिर तुम्हें जहाँ जाना हो वहाँ जा सकते हो।''*

होने लगी। दुर्ग पर से बरस रहे सिक्खों के तीर मुगल सेना को तितर-बितर करने लगे।

यह घेराव आठ-दस दिन नहीं, बल्कि पूरे एक महीने तक चला। किले के भीतर संग्रह किया हुआ अनाज का भंडार खत्म होने लगा। मुगलों को इस बात का पता चल गया। अतः वे दुर्ग को हथियाने के जोरदार प्रयास करने लगे। मुगलों के आक्रमण से दुर्ग पर जो सिक्ख थे, वे एक के बाद एक काम में आ गये।

गुप्त द्वार से किले की पिछली ओर पहुँचकर उन्होंने चैन की साँस ली। मुगल सेना को भुलावे में डालकर उन चालीसों ने वतन की राह पकड़ी।

ठीक इसी अरसे में ठण्डी ने अपना प्रभाव जमाना शुरू किया। अनाज की कमी के साथ हाथ मिलाकर वह भी सिक्खों को परेशान करने लगी। अनाज के कोठार के तल्ले भूखामरी की बीभत्सता का दर्शन कराने लगे।

सिक्ख योद्धा इन दोनों ओर के प्रहार से व्याकुल हो उठे। वैसे तो वे हिमालय की तरह अडिग थे लेकिन उनमें से कुछ बिल्कुल हिम्मत हार गये थे। उन्होंने साथ मिलकर विचार किया कि 'अब दुर्ग को सँभालने में सबकी समाधि यहीं पर हो जाएगी- ऐसी हालत है। इसलिये गुरु की अनुमति लेकर गुप्त द्वार से हम लोग यहाँ से निकल जायें।'

लड़ाई लड़ते-लड़ते जो हिम्मत हार चुके थे, वे चालीस सिक्ख एक ही गाँव के थे। गुरु गोविंदसिंह के पास जाकर उनके मुखिया ने कहा :

''गुरुजी ! हम आपसे अनुमति माँगने आये हैं।''

गुरु ने समझा कि 'ये चालीस वीर केसरिया करने की अनुमति चाहते हैं।'

गुरु ने सहर्ष कहा : ''इस हालत में युद्ध ही अपना धर्म है। धर्म के मार्ग पर आगे बढ़कर मुगल सेना को अपने अद्भुत साहस के दर्शन कराओ।''

''नहीं गुरुजी ! हम युद्ध में जाने की बात नहीं करते हैं। हम तो आपके पास घर जाने के लिये इजाजत माँगने आये हैं।'' मुखिया ने नीची मुंडी रखकर अपनी बात स्पष्ट करते हुए कहा।

उसके दूसरे साथियों ने भी उसमें स्वीकृति देते हुए कहा : ''हाँ गुरुजी ! हमें घर जाना है।''

अपनी दाढ़ी पर हाथ फिराते हुए गुरुजी ने कहा :

''खुशी से जाओ, भाइयों ! आपको जहाँ जाना हो वहाँ अपनी जिम्मेदारी से जा सकते हो। आप सबको मेरी इजाजत है लेकिन आपको मेरी एक शर्त का पालन करना पड़ेगा।''

''कौन-सी शर्त गुरुजी !'' जल्दी-जल्दी घर पहुँचने की आशा में अधीर बना हुआ एक अकाली बोल पडा।

''मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूँ- ऐसा त्यागपत्र तुम सब लिखकर दे दो। फिर तुम्हें जहाँ जाना हो वहाँ जा सकते हो।'' उन व्याकुल हुए अकालियों के सामने वेधक दृष्टि डालते हुए गुरुजी ने कहा।

गुरुजी की इस वेधक दृष्टि को वे नहीं झेल पाये। घड़ीभर एक-दूसरे की ओर निहारते हुए सबने नजरें झुका लीं। जमीन की ओर निहार रहे उन चालीसों के मुख पर जीवन जीने की जीजिविषा स्पष्टरूप से झिलमिला रही थी।

आखिर में उन चालीस अकालियों ने त्यागपत्र लिखकर देना कबूल कर लिया। निर्णय होते ही तुरंत त्यागपत्र तैयार करके नीचे उन चालीस अकालियों ने दस्तखत किये और त्यागपत्र गुरु के चरणों में सादर पेश कर दिया।

चारों ओर से उनके प्रति धिक्कार भरी नजरें उठने लगीं। इन तीखी कातिल नजरों से उनके दिल छलनी की तरह बिंध गये।

इसके बाद वे चालीस आदमी नतमस्तक वहाँ से चले। उनमें से किसीकी भी हिम्मत नहीं थी गुरुजी से दृष्टि मिलाने की। अगर उनमें से किसीने गुरु की ओर निहारा होता तो उन्हें इस बात की प्रतीति हो जाती कि गुरुजी की अमीदृष्टि उनके लिये आशीर्वाद बरसा रही है।

किले के गुप्त द्वार से किले की पिछली ओर

पहुँचकर उन्होंने चैन की साँस ली । मुगल सेना को भुलावे में डालकर उन चालीसों ने अपने वतन की राह पकड़ी। स्वजनों की याद उनके कदमों में अनोखा जोश भर रही थी ।

वे लोग अपने गाँव पहुँचे तब गाँव के लोग आनंद के उदधि में डूब गये । उन्होंने पूछा : ''क्या आनंदपुर का घेरा उठ गया ?''

कोई वीर जननि अपने लाड़ले से पूछ रही थी : ''बेटे ! गुरु की आज्ञा मानकर धर्म के प्रति अपना फर्ज पूरा-पूरा अदा किया है न ?''

गुरु ने उसके मस्तक पर वात्सल्यपूर्ण हाथ घुमाया । महानसिंह ने बड़ी मुश्किल से आँखें खोलीं। गुरुजी को देखते ही उसकी आँखों से पश्चात्ताप के आँसू बह निकले।

कोई नवोढ़ा (नयी दुल्हन) अपने हुलसित कंठ से पति से कह रही थी : ''मुगलों के दाँत खट्टे करके आये ? रुको, मैं आपकी आरती उतारूँ। मुगलों को दिन में भी तारे दिखा देनेवाले मेरे शूरवीर प्राणनाथ ! मैं अंतर के आदर से आपका सम्मान करती हूँ।''

कोई बहन अपने लाड़ले भाई से झुक-झुककर कह रही थी : ''वीर ! आनंदपुर की संग्राम-कथा सुनने के लिये मेरे कान अत्यंत आतुर हैं। कितने मुगलों को रणक्षेत्र में सुला दिया ? कितनों को तलवार की नोंक दिखाकर मार दिया ? रणक्षेत्र की एक-एक बात जानने के लिये मेरा अंतर अधीर हुआ जा रहा है।''

अपने स्वजनों के हृदय चीरकर निकल जायें ऐसे भाले जैसे प्रश्न सुनकर उन चालीस अकालियों के मुख बंद हो गये ।

''ऐसे चुपचाप क्यों बैठे हो ? शौर्य-कथा सुनाने में संकोच हो रहा है ? शरमायें वे जो युद्ध में पीठ दिखाकर आये हों। तुम्हें तो उल्लसित हृदय से अपनी विजयगाथा सुनानी चाहिए।''

उल्लसित बहन के प्रश्न का उत्तर देते हुए उस हताश भाई ने कहा : ''बहन ! हमने तो गुरुजी को त्यागपत्र लिखकर दे दिया है । हम चालू युद्ध से यहाँ चले आये हैं।''

अपने भाई की ऐसी कायरताभरी वाणी सुनकर बहन का मुख म्लान हो गया। यह बात चालीसों अकालियों के स्वजनों तक पहुँच गई ।

फिर तो उस छोटे-से गाँव में मानो ज्वालामुखी फूटने लगा।

माता अपने पुत्र पर फटकार बरसाते हुए कहने लगी : ''फट्ट रे मूंआ ! तेरी जगह मेरी कोख से पत्थर पैदा हुआ होता तो ठीक था। लोगों के कपड़े धोने के काम तो आता ! गुरुजी को, गुरुबंधुओं को, गुरु के बंदों को मौत के मुँह में छोड़कर आते हुए तुम्हारे पैर टूट क्यों नहीं गये ?''

फिर तो लाड़ली बहन भी खीजकर बोल पड़ी : ''मेरे भाई ! अपनी तलवार दे दे । तेरे हाथ में वह शोभा नहीं देती। धर्मद्रोही के हाथ में माता भवानी भी लजा उठती हैं । तू हमारे वस्त्र पहनकर घर में ही बैठ हम तेरे बदले युद्ध करेंगे।''

पत्नी अपने मुँह से क्या बोले ? लेकिन अपनी नजरों में पूरी घृणा भरकर उसने अपने स्वामी को दुत्कार दिया। नजरों से बरसनेवाला यह धिक्कार वाणी से भी कठोर था।

इस भूमि पर कायरों का काम नहीं है । धर्म की अपेक्षा अपने प्राणों को प्यारा माननेवालों की गिनती हमारे मन में तुच्छ मच्छर से जरा-भी विशेष नहीं है ।

फिर तो चारों ओर से उनके प्रति धिक्कार भरी नजरें उठने लगीं। इन तीखी कातिल नजरों से उनके दिल छलनी की तरह बिंध गये। गाँव में निकलना उन लोगों को भारी पड़ गया। स्वजनों की घृणाभरी दृष्टि रुख्सत देती हुई उन्हें कह रही थी कि 'इस भूमि पर कायरों का काम नहीं है। धर्म की अपेक्षा अपने प्राणों को प्यारा माननेवालों की गिनती हमारे मन में तुच्छ मच्छर से जरा भी विशेष नहीं है। जाओ, चले जाओ इधर से।'

जिन प्यारे स्वजनों के विरह में ये चालीस अकाली गुरु को त्यागपत्र देकर भाग निकले थे वे स्वजन तो उनका मुँह तक देखना नहीं चाहते थे। अब त्यागपत्र देकर चले आने का दुष्कृत्य हृदय में तीर की तरह

चुभने लगा। वे चालीस लोग चले वापिस आनंदपुर की ओर।

आनंदपुर का किला शत्रुओं के दल से पूरी तरह घिर गया था। जिस गुप्त रास्ते से वे लोग भाग निकले थे वह रास्ता भी अब शत्रुओं के दल से घिर चुका था। दुर्ग में किसी भी तरह से पहुँचने की संभावना ही नहीं थी।

वे चालीस जवान क्षणभर के लिये रुक गये। थोड़ी देर में उन्होंने सर्वसम्मति से निर्णय ले लिया कि 'आज तो दुश्मनों को भी छठी का दूध याद आ जाये ऐसा युद्ध करेंगे।'

चालीस अकालियों ने शत्रुओं के रक्त की प्यासी तलवारें अपने म्यान में से निकालीं और 'अलख निरंजन...', 'सत् श्री अकाल...' और 'फतेह गुरुजी की...' ऐसे बुलंद नारे लगाते हुए वे योद्धा मुगलों की सागर जैसी सेना पर पीछे के भाग से टूट पड़े। जैसे मूर्तिमंत महाकाल अपने सभी आयुधों से सजकर विविध रूप धारण करके युद्ध में उतर आया हो- ऐसा भयानक वातावरण चारों ओर छा गया।

इस एकाएक आक्रमण से मुगल सेना चौंक उठी। इतने में तो जान पर खेलनेवाले इन वीरों ने इस छोर से उस छोर तक मुर्दों का ढेर लगा दिया। इस अचानक किये गये हमले से मुगलों को हुआ कि अपने पीछे सिक्ख सेना की नयी टुकड़ी आ पहुँची है। इस भ्रम से मुगल सैनिकों के हाथ-पैर ढीले हो गये। दूसरी ओर आनंदपुर दुर्ग के भीतर से भी जोरदार आक्रमण हो ही रहा था। इस तरह दोनों ओर के आक्रमण के बीच मुगल सेना ऐसी कुचली गई कि जिसको जहाँ ठीक लगा वहाँ प्राण बचाने के लिये भाग निकला।

इन वीरों की अद्भुत वीरता को दुर्ग पर खड़े-खड़े गुरुजी निहार रहे थे। मुगल सेना घेरा उठाकर भाग गई तो उन चालीस योद्धाओं को आशीर्वाद देने के लिये गुरुजी किले पर से नीचे उतरे।

उन चालीस में से उनचालीस तो अंतिम साँस ले चुके थे लेकिन एक अभी जिंदा था। उसका नाम था महानसिंह।

उसके पास जाकर गुरु ने उसके मस्तक पर वात्सल्यपूर्ण हाथ घुमाया। महानसिंह ने बड़ी मुश्किल से आँखें खोलीं। गुरुजी को देखते ही उसकी आँखों से पश्चात्ताप के आँसू बह निकले। गुरुजी का हाथ पकड़कर छाती से लगा लिया और रूँधे हुए स्वर से बोला : ''गुरुदेव !''

''वाह ! भाई महानसिंह, वाह ! तुम सबने तो आज सचमुच में अपना जीवन चमकाया है। माँग ले, भाई ! तू जो माँगेगा वही तुझे दूँगा।''

''गुरुदेव !'' अत्यंत क्षीण स्वर से वह बोला : ''और कुछ नहीं चाहिए लेकिन हमने आपको जो त्यागपत्र लिखकर दिया था उसे फाड़ डालियेगा। हम सबकी अंतिम इच्छा यही थी।''

> *''गुरुदेव ! और कुछ नहीं चाहिए लेकिन हमने आपको जो त्यागपत्र लिखकर दिया था उसे फाड़ डालियेगा।''*

गुरुजी ने जेब में से त्यागपत्र निकालकर उसको फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। 'धर्म के लिये फना हो जाने के लिये सिक्खों में जलाई हुई ज्योत अभी-भी ऐसी ही जल रही है'- इस बात की प्रतीति होते ही गुरुजी का दिल द्रवीभूत हो उठा। महानसिंह की अंतिम घड़ियों में उसे आशीर्वाद देते हुए गुरुजी ने कहा :

''बेटे ! तुम चालीसों ने मृत्यु को जीतकर अमरपद पाया है। काया का मोह दूर होने से तुम भवपार हो गये हो। आज नहीं तो कल जो जल जानेवाली थी उस देह का बलिदान धर्म की रक्षा के लिये दिया है... तुम धन्य हो।''

[गुरु गोविंदसिंह और उनके सिक्खों से लड़नेवाले उस समय कितनी सत्यबुद्धि से सोचते होंगे, कितने जौहर से मरते-मारते होंगे ! समय की विशाल धारा में सब स्वप्नमात्र... सत्य दिखते हुए भी वास्तव में स्वप्न। इसको देखनेवाला दृष्टा चैतन्यस्वरूप आत्मा ही सार। 'संसार स्वप्न है' - ऐसा दृढ़ चिंतन करके जो अपने साक्षी स्वभाव में स्थित हो जाता है, जाग जाता है, आत्मा-परमात्मा से एक हो जाता है वही धनभागी है।]

सच्चा धनवान

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

अगर आप मामूली आदमी हैं, कहीं पर छोटी-मोटी नौकरी कर रहे हैं और आपकी कार्य करने की रीति, कार्य करने का उत्साह, सच्चाई और प्रामाणिकता से प्रभावित होकर सेठ अगर आपको अपने मुनीम की जगह पर रख ले और आपकी तनख्वाह बढ़ा दे तो आप राजी हो जाते हो। सेठ के पास रहते-रहते आप धन्धे की सब खूबियों से वाकिफ हो जाते हो तो आप अपना स्वतंत्र धन्धा शुरू करके ज्यादा पैसे भी कमाने लगते हो और धन्धा खूब जम गया तब एक दुकान से दूसरी दुकान, छोटे-से मकान के बदले बड़ा आलीशान मकान, बढ़िया फर्नीचर, कीमती कार खरीद लेते हो एवं ऐश-आराम में रहने लगते हो। फिर आप अपने-आपको सुखी मानने लगते हो। लोग भी कहते हैं कि 'यह तो बहुत सुखी आदमी है।'

लेकिन क्या आप सचमुच में सुखी होते हो ? नहीं, क्योंकि बाहर की सुख-सुविधाओं से अंतर के सुख का कोई संबंध नहीं होता।

बाहर की सुख-सुविधा के लिये आप प्रयत्न करते हो और उसे पा भी लेते हो लेकिन आप जरा शांत होकर अपने भीतर झाँको, जरा देखो कि बाहर तो सुख बढ़ा लेकिन भीतर सुख बढ़ा है कि कम हुआ है ? बंगला-गाड़ी सजाने में कहीं अपने अहंकार को तो नहीं सजाया है ? इतना धन पाने के बावजूद और अधिक धन पाने की लालसा खत्म हुई कि बढ़ी ? अगर कोई अच्छा काम, बड़ा काम कर लिया तो बड़ा कहलाने की इच्छा से किया कि निष्कामता से किया ? यह सब करते हुए भी 'आखिर क्या ?' ऐसा विवेक जागृत रखकर बड़े में बड़ा परमात्मा जो हमारा आत्मा बनकर बैठा है, अपने उस चैतन्यस्वरूप को पाने के लिये कुछ किया कि नहीं ? पूछो अपने-आपसे।

अगर उत्तर 'हाँ' में आया, भीतर का धन पाने की अभिलाषा है, उसके लिये कुछ पुरुषार्थ है तो आपका बाहर का धन-वैभव काम का है। अन्यथा किसीके पास बाहर का धन तो खूब हो किन्तु भीतर किसी-न-किसी कारण से अशांति बनी हुई हो तो वह धनवान होते हुए भी कंगाल है। किन्तु अगर कोई बाहर तो बड़ी मुश्किल से दो रोटी और पहनने के कपड़े जुटा पाता हो, रहने के स्थान का कोई ठिकाना न हो फिर भी उसके पास अगर संतोष है, आत्मिक आनंद से तृप्त है तो वह कंगाल दिखते हुए भी सच्चा धनवान है।

रबिया से कुछ गलती हो गई तब वह दुष्ट सेठ रबिया के हाथ पर कुर्सी के पाये रखकर कुर्सी पर चढ़ बैठा और रबिया के हाथों को कुचलने लगा।

रबिया और उसके सेठ की ऐसी ही स्थिति थी। एक धनवान होते हुए भी कंगाल और दूसरा कंगाल दिखते हुए भी धनवान !

रबिया का सेठ जागा। उसे हुआ कि 'आधी रात को रबिया किसीसे बातें कर रही है ! जरूर उसका कोई दोस्त होगा, कोई यार होगा। अब तो पकड़ूँ उसकी चोरी और कर दूँ उसकी पिटाई...'

रबिया को उसके सेठ ने गुलाम के रूप में खरीदा था। वह सेठ बड़ा दुष्ट और निर्दयी था। रबिया से खूब काम करवाता और जरा-सी गलती होती तो उसे डाँटता-फटकारता। फिर भी रबिया ने वहाँ से भागना नहीं चाहा, न ही वह पलायनवादी बनी।

एक बार काम करते-करते रबिया से कुछ गलती

हो गई तब वह दुष्ट सेठ रबिया के हाथ पर कुर्सी के पाये रखकर कुर्सी पर चढ़ बैठा और रबिया के हाथों को कुचलने लगा, पीड़ा देने लगा। इस प्रकार वह क्रूर कई बार रबिया को पीड़ित करता था।

सब काम निपटाकर रात को रबिया अपनी टूटी-फूटी झोंपड़ी में चली जाती। सोने से पहले वह अपने परमात्मा की, ख़ुदा की बंदगी करके ही सोती थी। उस रात को भी अपनी टूटी-फूटी झोंपड़ी में जब रबिया की नींद खुल गई तो वह मालिक को पुकारने लगी : 'हे मेरे खुदा ! मैं तेरी बंदगी करती हूँ तो बिस्त पाने के लिये नहीं करती हूँ। दोजख के भय से डरकर भी तुझे नहीं पुकारती हूँ। सेठ परेशान करता है तो परेशानी मिटाने के लिये भी तुझे नहीं कहती हूँ। संसार की सुख-सुविधा भी नहीं माँगती हूँ। न मुझे गहने-कपड़े ही चाहिये। मेरे मालिक ! तेरे लिये मेरा प्रेम किसी चाह का गुलाम न हो। मेरा प्रेम निष्काम हो, निष्पाप हो। मेरा प्रेम बस प्रेम हो। हे मेरे खुदा ! तू ही मेरे जीवन का सहारा हो। तेरे सिवा सब मुझे मिथ्या भासे, सब स्वप्नरूप भासे। मैं तुझमय हो जाऊँ, मेरे खुदाताला...'

> *पगली रबिया पुकारते-पुकारते एकाग्रचित्त हो गई तो उसके संकल्प-विकल्प शांत हो गये। उसकी प्राणशक्ति ऊपर उठकर आज्ञाचक्र तक पहुँच गयी। वहाँ उसे अनंत-अनंत सूर्यों का प्रकाश फैला हो ऐसा अनुभव होने लगा।*

पगली रबिया इस प्रकार गुनगुनाए जा रही थी। पुकारते-पुकारते वह एकाग्रचित्त हो गई तो उसके संकल्प-विकल्प शांत हो गये। उसकी प्राणशक्ति ऊपर उठकर आज्ञाचक्र तक पहुँच गयी। वहाँ उसे अनंत-अनंत सूर्यों का प्रकाश फैला हो ऐसा अनुभव होने लगा। वह अपने आपमें शांत होकर मस्ती में मस्त हो गयी।

रबिया का सेठ नींद से जागा तो उसको रबिया की झोंपड़ी से कुछ आवाज सुनाई दी। उसे हुआ कि 'आधी रात को रबिया किसीसे बातें कर रही है ! जरूर उसका कोई दोस्त होगा, कोई यार होगा। अब तो पकडूँ उसकी चोरी और कर दूँ उसकी पिटाई...'

वह धीरे-से रबिया की झोंपड़ी के पास आया। झाँककर देखा तो रबिया अकेली आँखें बंद करके मस्ती में बैठी है और कुछ बड़बड़ाये जा रही है : 'हे मेरे मालिक ! मैं दुःख मिटाने के लिये प्रार्थना नहीं करती हूँ। दुःख तो प्रारब्ध से आता है, जाता है। आखिर में जब शरीर मिटेगा तब तो शरीर के दुःख और बीमारियों को भी मिटना पड़ेगा। मैं धन पाने के लिये तुझे प्यार नहीं करती हूँ, नहीं पुकारती हूँ क्योंकि शरीर के मिटने के साथ ही धनवानपना और निर्धनता भी मिट जाएगी यह मैं जानती हूँ। हे मेरे रब ! मैं तो तुझे इसलिए प्यार करती हूँ कि मेरा चित्त कहीं और न फँसे। तू ही मेरे जीवन का सर्वस्व रहे, प्रभु !'

रबिया दोहराये जा रही है और वह सेठ झोंपड़ी के बाहर स्तब्ध-सा खड़ा होकर सुन रहा है। रबिया की बातें सुनकर और उसकी मस्ती देखकर वह कुछ चकित-सा रह गया। रबिया की सच्चे हृदय की पुकार के आंदोलन उसके चित्त पर असर कर गये। उसके पाप नष्ट हो गये। उसका चित्त पिघल गया। वह झोंपड़ी का दरवाजा खोलकर अंदर आया और रबिया के पैरों पर गिर पड़ा।

> *वह सेठ चकित-सा रह गया। रबिया की सच्चे हृदय की पुकार के आंदोलन उसके चित्त पर असर कर गये। उसके पाप नष्ट हो गये। उसका चित्त पिघल गया और वह रबिया के पैरों पर गिर पड़ा।*

''रबिया ! मुझे माफ कर दे। मैंने आज तक तुझे बहुत सताया है। शायद इसलिए ही तू रो रही है और खुदा को पुकार रही है।''

रबिया ने कहा : ''नहीं नहीं सेठजी ! आपकी बड़ी कृपा है मुझ पर। अब मुझे इस झूठे जगत में आसक्ति नहीं हो रही है। मैं तो अपना ऋण चुका रही हूँ। किसी जन्म में आपका लिया होगा, खाया होगा।

(शेष पृष्ठ २१ पर)

मुख्य मंत्री, हरियाणा।
चण्डीगढ़, सितम्बर १९९७

संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि मनुष्य के सच्चाई के मार्ग पर चलने और उसे आध्यात्मिक एवं मानसिक शान्ति देने के उद्देश्य से संत श्री आसारामजी आश्रम ट्रस्ट द्वारा जो मासिक पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' का प्रकाशन किया जा रहा है उसके सात वर्ष पूरे हो गये हैं और अब यह पत्रिका प्रकाशन के आठवें वर्ष में प्रवेश करने जा रही है।

हमारे देश में विभिन्न धर्मों व मत-मतान्तरों को माननेवाले लोग रहते हैं। पूजा-अर्चना के ढंग अलग-अलग हो सकते हैं लेकिन सब की मंजिल एक ही है। अनेकता में एकता ही हमारे देश की संस्कृति की सबसे बड़ी पहचान है। इसीलिए कहते हैं :

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तां हमारा।

प्राचीन काल से ही हमारे देश के संत-महात्माओं और ऋषि-मुनियों ने भटके हुए लोगों का सदा मार्गदर्शन किया है और उन्हें सही रास्ता दिखाया है।

हमारे नैतिक मूल्यों और परम्पराओं की रक्षा के लिए आज के इस कठिन समय में धार्मिक संस्थाएँ उम्मीद की एक किरण के समान दिखाई देती हैं। यह गौरव की बात है कि संत श्री आसारामजी आश्रम ट्रस्ट मानव-कल्याण और धार्मिक सहिष्णुता के क्षेत्र में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में भी यह संस्था और सक्रिय होकर इसी तरह मानव-कल्याण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान देगी। मैं 'ऋषि प्रसाद' के सफल प्रकाशन के लिए अपनी शुभकामनाएँ देता हूँ।

(हस्ताक्षर)
बंसीलाल

(पृष्ठ २० का शेष)

अब सब हिसाब पूरा हो रहा है। मैं यहाँ से भाग जाऊँ या आपको सजा मिले ऐसा कुछ मैंने उससे नहीं माँगा। मैं तो उससे कहती हूँ कि बस, मेरा मन उसीमें लगा रहे। सेठजी ! आप निश्चिन्त रहिए।''

उस क्रूर सेठ का हृदय बदल गया। उसने रबिया से कहा : ''रबिया ! अब तू इधर नहीं रहेगी। मैं तेरे लिए बढ़िया व्यवस्था कर देता हूँ।''

रबिया : ''मैं तो आपकी नौकरानी हूँ। मैं यहीं ठीक हूँ। अगर आप मुझे मान देने लगे तो मुझे लगता है कि यह तो मुझे भक्ति से गिरा देगा। मेरी वाहवाही होने लगी और मैं अहंकार के चक्कर में आ गई तो मेरी भक्ति छूट जाएगी।''

रबिया की नम्रता देखकर सेठ का हृदय और भी पिघल गया। वह कहने लगा : ''नहीं रबिया ! तू नौकरानी नहीं, मेरी गुरु है। तूने मेरी आँखें खोल दीं।''

फिर रबिया को गुरु मानकर उस सेठ ने अपना बाकी का जीवन धन्य किया। वैसे तो सेठ था लेकिन गुलाम के आगे झुकने में उसे कोई संकोच न हुआ। इससे उसके हृदय की दुष्टता, निर्दयता, अशांति कम होते-होते नष्ट हो गई और बदले में हृदय का आनंद, चैन, सुख-शांति सब बढ़ने लगा।

सच ही है कि मनुष्य की महान्ता उसके बाह्य सुख-वैभव में नहीं वरन् आंतरिक सच्चाई, प्रेम, सदाचार आदि आंतरिक वैभव में निहित होती है। जिसके पास ऐसा आंतरिक वैभव होता है वह बाहर से गुलाम दिखता हुआ भी भीतर से शहनशाह होता है और बाहर-से धनवान दिखते सेठ भी उसके आगे नतमस्तक हुए बिना नहीं रह सकते।

आत्मवेत्ता गुरु के साथ एक क्षण का सत्संग भी लाखों वर्षों के तप की अपेक्षा कहीं उच्चतर है।
- स्वामी शिवानंदजी

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

लापरवाही से बचो

इंग्लैंड का प्रसिद्ध राजा अल्फ्रेड अपने कुल-परंपरा के अनुसार राजगद्दी पर बैठा। राजगद्दी पर बैठने के बाद वह ऐशो-आराम और विलासिता में डूब गया, बुद्धि कमजोर हो गयी। शत्रुओं ने देखा कि 'यह तो विलासी है' अतः उन्होंने धावा बोल दिया और अल्फ्रेड को हरा दिया। राज्य छीनकर उसे मार भगाया।

अब इंग्लैंड का वह भूतपूर्व राजा अल्फ्रेड दर-दर की ठोंकरें खाने लगा और अपना पेट भरने के लिए किसी देहात में एक किसान के यहाँ नौकरी करने लगा।

एक दिन किसान की पत्नी ने कहा : ''मैंने चूल्हे पर दाल रखी है। मैं जरा पड़ोस में जाती हूँ। तुम ध्यान रखना।''

अल्फ्रेड बैठा-बैठा दिवा-स्वप्न देखने लग गया तथा दाल उबल-उबलकर कोयला हो गयी और उसे पता तक न चला।

जब किसान की पत्नी लौटी तो देखती है कि अल्फ्रेड आकाश की ओर निहारता-निहारता कुछ सोच रहा है और दाल जलकर कोयला हो गयी है। अतः वह क्रोधित होती हुई बोली :

''मालूम होता है इंग्लैंड के राजा अल्फ्रेड की छाया तुझ पर पड़ी है। जैसे वह शेखचिल्ली के विचारों-विचारों में हार गया और दर-दर की ठोकरें खा रहा है वैसे ही तेरे भाग्य में भी दर-दर की ठोकरें खाना ही लिखा है, ऐसा लगता है।''

उस किसान की पत्नी को क्या पता कि यह इंग्लैंड का राजा खुद अल्फ्रेड है! अल्फ्रेड ने पूछा :

''अल्फ्रेड को ठोकरें क्यों खानी पड़ी ?''

''जो काम जिस वक्त करना चाहिए वह नहीं किया और खाली विचार ही करता रहा, चापलूसों से घिरा रहा इसीलिए उसका राज्य बरबाद हो गया। अगर वह ध्यान और तत्परता से राज्य करता तो उसे आज बुरे दिन नहीं देखने पड़ते।''

जिस वक्त जो काम मिले उसे पूरी तरह से एकाग्रचित्त होकर करना चाहिए, तत्परता से करना चाहिए।

Work While you Work Play While you Play,
That is the way to be happy and gay.

जब पढ़ते हो तब पूरे पढ़ाई में खो जाओ। लिखना हो तो लिखने में खो जाओ। जब खेलते हो तो पूरे खेल में खो जाओ। कुश्ती करते हो तो पूरे कुश्तीमय हो जाओ। जो भी करो उसमें पूरे मनोयोग से लग जाओ। इसी तरह घर, व्यापार या कार्यालय का कार्य तत्परता से करो।

किसान की पत्नी डाँटती हुई बोली : ''तू तो अल्फ्रेड जैसा है। हमारे घर रहने के लायक नहीं है।''

अल्फ्रेड की सोयी हुई चेतना जाग उठी। वह समझ गया कि मेरी ही बेवकूफी के कारण मैं दर-दर की ठोकरें खा रहा हूँ। उस किसान के घर से वह निकल पड़ा तथा धीरे-धीरे कमाई करके कुछ पैसे इकट्ठे किये, कुछ चंदा इकट्ठा किया और कुछ लोगों को तैयार करके पुनः इंग्लैंड पर चढ़ाई करके अपना खोया हुआ राज्य जीत लिया।

इंग्लैंड का वह राजा अल्फ्रेड दर-दर की ठोकरें खाने लगा और अपना पेट भरने के लिए किसी देहात में एक किसान के यहाँ नौकरी करने लगा।

फिर तो उसने इतनी तत्परता से राज्य किया कि लोग कहने लगे : Alfred is a great king. अल्फ्रेड महान् राजा है।

अल्फ्रेड पलायनवादी की सूची में आकर दर-दर की ठोकरें खा रहा था और जब उस किसान-

पत्नी की डाँट से उसे अपनी बेवकूफी का पता चल गया तो अपनी बेवकूफी को दूर करके Great Alfred कहलाने लगा।

''जो काम जिस वक्त करना चाहिए वह नहीं किया और खाली विचार ही करता रहा, चापलूसों से घिरा रहा इसीलिए उसका राज्य बरबाद हो गया।''

हे विद्यार्थियों और तमाम भारतवासियों ! तुम भी अगर चाहो तो अपने जीवन में से पलायनवादिता और लापरवाही को दूर करके उत्साह एवं तत्परता जगाकर भारतमाता के महान् सपूत बन सकते हो। ईश्वर का असीम बल तुममें छुपा है। उठो... जागो... दूर करो लापरवाही को और तत्परता एवं कुशलता-पूर्वक छलांग मारो। फिर तो पाओगे कि सफलता तुम्हारा ही इंतजार कर रही है।

*

जाँनिसारी का राष्ट्रप्रेम

एक जापानी जहाज में कुछ भारतवासी युवक सवार थे। जहाज़ में जो उनके दर्जे के यात्रियों को खाने को मिला वह किसी कारण विशेष से उन्होंने नहीं लिया। एक निर्धन जापानी लड़के जाँनिसारी ने देखा कि ये भारतवासी भूखे हैं। वह उन सबके लिये दूध और फल आदि खरीदकर लाया और सामने रख दिया। भारतवासियों ने पहले तो अपने स्वभाव के अनुसार उसे अस्वीकार किया लेकिन आग्रहवशात् बाद में खा लिया।

जब जहाज से उतरने लगे तो धन्यवाद के साथ वे भारतीय युवक उन वस्तुओं का मूल्य देने लगे। जापानी लड़के ने पैसे नहीं लिये परन्तु रोकर यूँ प्रार्थना करने लगा कि : ''जब भारतवर्ष में जाओगे तो कहीं यह ख्याल न फैला देना कि जापानी लोग ऐसे नालायक हैं कि उनके जहाजों पर छोटे दर्जे के यात्रियों के लिये खाने-पीने का यथोचित प्रबन्ध नहीं है।''

जरा ख्याल कीजियेगा। एक निर्धन यात्री लड़का, जिसका कि जहाज के साथ कोई सम्बन्ध नहीं, उसने अपना द्रव्य इसलिए अर्पण किया कि कहीं कोई उसके देश के जहाजों को भी बुरा न कहे। यह लड़का अपने जीवन को देश से पृथक् नहीं मानता। सारे देश के अस्तित्व को व्यावहारिकरूप में अपना अस्तित्व अनुभव करता है। क्या भक्ति है ! क्या प्राण-समर्पण है ! देश के साथ क्या एकता है ! यह है नकद धर्म ! इस व्यावहारिक एकता के बिना उन्नति और कल्याण का कोई उपाय नहीं।

मरना भला है उसका जो अपने लिए जिये।
जीता है वह जो मर चुका इन्सान के लिए ॥
(स्वामी रामतीर्थ : 'अरण्य संवाद' से)

*

(पृष्ठ २८ का शेष)

पित्तनाशक होता है। परंतु मिठास के कारण ज्यादा खा लिया जाये तो वायु एवं कफ को कुपित करता है एवं प्रमेहादि व्याधियों को उत्पन्न करता है।

प्लीहा (तिल्ली) की वृद्धि में इसकी पुल्टिस बनाकर बाँधने से एवं दिन में तीन बार इसका आधा चम्मच दूध एक चम्मच मिश्री मिलाकर खिलाने से लाभ होता है।

गर्म होने के कारण सगर्भावस्था में, उष्ण प्रकृतिवालों को एवं ज्वर में तथा भारी होने के कारण अपच के रोगियों को नहीं खाना चाहिए।

सेवाधारियों एवं ग्राहकों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी तरह की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

तलाक : सहनशक्ति का अभाव

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

एक महाराज गाँव में भिक्षा माँगने निकले। महाराज पहुँचे हुए संत थे। बाहर का वेश तो संत का था ही, साथ ही अंदर से भी रंगे हुए थे। महाराज गाँव में भिक्षा माँगने के लिए घूम रहे थे। किसीका दरवाजा खटखटायें उसके पहले ही उन्हें एक घर में से पति-पत्नी की लड़ाई की आवाज आयी। पति बोल रहा था : 'तू तो ऐसी है... वैसी है...' और पत्नी कह रही थी : 'तुमने तो मुझे परेशान कर दिया है...'

दोनों एक जमाने में प्रेमी-प्रेमिका थे। 'लव-मैरेज' की थी और आज एक-दूसरे से तंग आ गये थे।

दोनों एक जमाने में प्रेमी-प्रेमिका थे। 'लव-मैरेज' की थी और आज एक-दूसरे से तंग आ गये थे।

बाबाजी ने सोचा कि घर में पति-पत्नी एक दूसरे पर अग्निवर्षा कर रहे हैं। बाहर की अग्नि होती तो फायरब्रिगेडवाले आकर उसे बुझा देते लेकिन यहाँ तो दिल में ही आग लगी है। दिल की अग्नि तो भैया ! हमें ही बुझानी पड़ेगी।

''हम कालेज में जब मिलते थे तो यह बोलता था 'तू तो चंद्रमुखी है।' हमने लव-मैरेज की। एक साल बाद मुझे कहने लगा 'तू तो सूर्यमुखी है...' अब तो यह मुझे 'ज्वालामुखी' बोलने लगा है।''

बाबाजी ने जान-बूझकर उसी घर के दरवाजे को खटखटाया और बोले :

''नारायण हरि... दरवाजा खोलो। साधु आया है।''

इससे दोनों कुछ अंश में शांत हो गए। दरवाजा खोला पत्नी ने।

बाबाजी : ''नारायण हरि... क्या बात है बेटी ! कोई मुसीबत आन पड़ी है क्या ?''

बाबाजी की प्रेमभरी वाणी सुनकर पत्नी की आँखें भर आयीं। वह एकदम से रो पड़ी और अपनी व्यथा सुनाने लगी :

''बाबाजी ! आज तो घर में खाना पका ही नहीं है। क्या करूँ ? जीवन जहर जैसा लग रहा है। इससे तो मैं मर जाऊँ तो अच्छा।''

बाबाजी : ''बेटी ! आखिर बात क्या है ?''

पत्नी : ''बाबाजी ! आज से तीन साल पहले शादी के पहले हम कालेज में जब मिलते थे तो यह बोलता था कि 'आहाहा... तू तो चंद्रमुखी है।'

बाबाजी ! फिर हमने लव-मैरेज की। उसके एक साल बाद मुझे कहने लगा कि 'रांड ! तू तो सूर्यमुखी है... सूर्यमुखी।' पहले मुझे चंद्रमुखी-सा मुखड़ा कहता था, फिर सूर्यमुखी कहने लगा। बाबाजी ! क्या बताऊँ ? मेरी शादी का अभी तीसरा साल चल रहा है। अब तो यह मुझे 'ज्वालामुखी' बोलने लगा है। मैं तो तंग आ गयी हूँ इस जीवन से।''

इतने में उसका पति बोल पड़ा : ''महाराज ! केवल इसको न सुनिये, मुझे भी सुनिये। पहले मेरा और इसका घर आमने-सामने पड़ता था। फिर भी मैं कभी कॉलेज में नहीं जाता तो दूसरे दिन मुझे कहती थी : 'प्राणनाथ... प्राणनाथ... तुम्हें देखे बिना पानी का एक घूँट भी गले से नहीं उतरता।' फिर जब शादी हो गयी और एक साल बीता न बीता तब बोलने लगी कि : 'नाथ ! खाना खा लेना। नाथ ! इतनी चीजें ले आना।' पहले तो मैं प्राणनाथ था, एक वर्ष बीता और मैं अकेला 'नाथ' रह गया। फिर दूसरा वर्ष बीता और अब तीसरा चल रहा है इसमें तो इसने

मुझे 'अनाथ' बना दिया। महाराज ! मैंने 'लव-मैरेज' करके घर से तो नाता तोड़ ही लिया था, अब इसने भी मुझे कहीं का न रखा। महाराज ! मैं तो अनाथ हो गया... मेरा इस दुनिया में कोई नहीं है।''

यह कई घरों की कहानी है। आज-कल छोटी-छोटी बातों को लेकर पति-पत्नी एक-दूसरे से परेशान हो जाते हैं और तलाक लेने की बात सोचने लगते हैं। पति कहता है कि 'पत्नी ठीक नहीं है।' पत्नी कहती है कि 'पति ठीक नहीं है' लेकिन 'लव-मैरेज' तो तुमने एक-दूसरे से मिलकर, समझकर की थी न ! अपनी पसंद से की थी न ! फिर क्यों कोर्ट को और दूसरे लोगों को परेशान करते हो ?

कारण है सहनशक्ति का अभाव। इसीका नाम है डायवोर्स (तलाक)। कभी पति ढील कर दे तो कभी पत्नी ढील कर दे, एक-दूसरे का सहायक बनकर, थोड़ा-बहुत चलाकर, समझकर रहा जाये तो गृहस्थाश्रम ठीक चलता है, नहीं तो परिणाम तलाक में आने लगता है।

तलाक लेना हमारी संस्कृति में नहीं है। यह तो पश्चिमी देशों का बुरा प्रभाव है। भारतीय संस्कृति के उच्च आदर्शों को भूलने के कारण ही आज देश में यह परिणाम देखना पड़ रहा है।

तलाक लेना हमारी संस्कृति में नहीं है। यह तो पश्चिमी देशों का बुरा प्रभाव है। भारतीय संस्कृति के उच्च आदर्शों को भूलने के कारण ही आज देश में यह परिणाम देखना पड़ रहा है।

मनुष्य को चाहिए कि अपने अतीत के गौरव को याद करे। स्त्रियाँ सीता, सावित्री और मदालसा आदि सतियों का आदर्श सामने रखें तो पुरुष श्रीराम, राजा जनक, सत्यवान् जैसों के चरित्रों का स्मरण करें। अपनी गौरवशालिनी संस्कृति की याद दिलानेवाले संत-महापुरुषों के चरणों में जाकर सही जीवन जीने की दिशा प्राप्त करें। संत-महापुरुषों से प्रेरणा पाकर अपने में सहनशीलता, धैर्य, गंभीरता, उदारता जैसे दिव्य गुणों को अपनाकर अपना विकास करें। अगर इतना कर लिया तो फिर तलाक की नौबत ही नहीं आयेगी। इससे गृहस्थ जीवन तो सुख, प्रेम, शांति और माधुर्य से भरपूर होगा ही, साथ ही आध्यात्मिकता का भी विकास होने लगेगा।

*

(पृष्ठ ११ का शेष)

ऐसे मझधार में थपेड़े खाता हुआ मनुष्य यदि विवेक-बुद्धिरूपी नाव को पा ले तो उस नाव का सहारा लेकर वह आसानी से भवसागर तर सकता है। संसार के थपेड़े खाते-खाते दादा भी गये, परदादा भी गये, उनके नाम तक नहीं जानते हैं लोग। और भी इतने लोग चले गये जिनकी कोई गिनती नहीं हो सकती... हम भी ऐसे ही चले जायें उससे पहले विवेक जगाकर, जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि में दुःख को देखकर इनसे बचने के उपाय करना चाहिए। यही है दर्शन योग।

इन बारह योग की साधना करनेवाला साधक बड़ा सामर्थ्य पा लेता है। रिद्धि-सिद्धि भी पा लेता है... लेकिन यह भी कोई बड़ी बात नहीं है। जिसने आत्मसिद्धि पा ली, अपने आत्मा का ज्ञान पा लिया उसने अपना काम बना लिया। आप भी अपने अनुकूल साधना के पथ पर चलकर अपना काम बना लो... समय बीता जा रहा है...

सर्वदेवमयी गौमाता

सर्व देवा गवांमंगे तीर्थानि तत्पदेषु च।
तद्गुह्येषु स्वयं लक्ष्मीस्तिष्ठत्येव सदा पितः॥
गोष्पदाक्तभृदां यो हि तिलकं कुरुते नरः।
तीर्थस्नातो भवेत् सद्यो जयस्तस्य पदे पदे॥
गावास्तिष्ठन्ति यत्रैव तन्तीर्थं परं कीर्तितम्।
प्राणान्त्यक्त्वा नरस्तत्र सद्यो मुक्तो भवेद् ध्रुवम्॥
(ब्रह्म वैवर्तपुराण, श्रीकृष्ण जन्म : २१-९१-९३)

गौमाता के शरीर में समस्त देवगण तथा पैरों में समस्त तीर्थ निवास करते हैं। पैरों में समस्त तीर्थ होने के कारण गाय के पैरों में लगी मिट्टी का तिलक जो करता है वह तत्काल तीर्थजल के स्नान के बराबर पुण्य प्राप्त करता है और पद-पद पर उसकी विजय होती है। देव-स्थानों को तीर्थ कहा जाता है और चूँकि सारे देवता गौमाता के शरीर में निवास करते हैं अतः जहाँ गाय रहती है उस स्थान को तीर्थभूमि कहा जाता है। ऐसी भूमि में मृत्यु होने पर मनुष्य मुक्त हो जाता है।

गौमाता का प्रतिदिन दर्शन एवं नमस्कार करके उसकी परिक्रमा करें। धन तथा यश की कामना करनेवाले व्यक्ति को प्रतिदिन गायों की प्रदक्षिणा करनी चाहिये। शास्त्रों के अनुसार तैंतीस करोड़ देवता माने गये हैं। इन सभी देवी-देवताओं का निवास गौमाता में होने से इसे विश्वरूपा कहा गया है। इसकी पूजा से समस्त देवी-देवताओं की पूजा हो जाती है। चराचर जगत की माता यानी विश्व की आधार गौमाता ही है। वेदों, पुराणों जैसे पद्मपुराण, भविष्यपुराण, ब्रह्माण्ड पुराण, स्कंद पुराण, महाभारत, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, श्रीमद्भगवद् गीता, बृहत्पराशर स्मृति, अग्निपुराण आदि में गाय के शरीर में अनेक देवी-देवताओं के निवास का वर्णन किया गया है।

गाय की सींग के शिरो भाग में शिव, बीच में नारायण तथा नीचे के भाग में प्रजापति और परमेष्ठी ब्रह्माजी का निवास माना जाता है। इसके सिर पर इन्द्र, ललाट के अग्रभाग पर देवी पार्वती तथा ललाट पर महादेव एवं अग्निदेव का निवास माना जाता है। मस्तिष्क में चन्द्रमा स्थित है इसलिए गाय का मस्तिष्क काफी शीतल तथा धैर्यवान माना जाता है। इसे क्रोध बहुत कम होता है। इसकी दाहिनी आँख में सूर्य तथा बाँई आँख में चन्द्रमा का निवास होता है। गाय के मध्यभाग में कार्तिकेय, नासापुटों में कम्बल और अश्वर नागों का निवास माना गया है। ऐसा भी माना जाता है कि गाय हमें देखते ही हमारे बहुत से पूर्व जन्मों के विषय में जान जाती है। किस भाव से गाय के पास कौन जाता है इसे वह भाँप जाती है। हाथी के विषय में माना जाता है कि वह तीन मील की दूरी से आते व्यक्ति के विषय में जान जाता है कि वह शत्रु है या मित्र। इसी तरह गाय अपने ही नहीं बल्कि अपने मालिक के शत्रु तथा मित्र की भी परख कर लेती है।

गाय के कानों में अश्विनी कुमारों का निवास माना गया है। गाय का ऊपरी जबड़ा द्युलोक तथा निचला जबड़ा पृथ्वी माना जाता है। बीच में यानी मुखमण्डल में सारा विश्व समाया हुआ है। गाय के मुखमण्डल में ही चारों वेद तथा गन्धर्व समाहित हैं। इसकी जिह्वा में अग्निदेव तथा वरुणदेव हैं। इसके कंठ तथा हुंकार में सरस्वती देवी का निवास है। दाँतों में मरुत देवता, ओठों में वसुगण तथा जिह्वा में वरुण का निवास है। ओठों में दोनों संध्याएँ, गालों में यम, मानव तथा यक्षों का निवास है। इसके गले की संधि में यम, गले में रेवती नक्षत्र तथा कंधे में कृत्तिका नक्षत्र का वास है।

गौमाता के कंठ में आह्वनीय अग्नि, हृदय में दक्षिणाग्नि, उदर में गार्हपत्य अग्नि तथा कुक्षियों में

सभ्य एवं आवसथ्य अग्नि तथा तालु में सम्याग्नि का निवास है। पृष्ठ वंश की हड्डी में रुद्र, कूबड़ में बृहस्पति एवं आकाश, पीठ में देवांगनाएँ, ग्यारह रुद्र तथा पसली की हड्डियों में देवांगनाओं की परिचारिकाएँ रहती हैं। गौमाता के कंधे में मित्र और वरुण देवता, दक्षिणपार्श्व में वरुण और कुबेर तथा वाम पार्श्व में तेजस्वी तथा महाबली यक्ष रहते हैं। इसके गल कम्बल में यक्षगण तथा कक्ष में साध्यदेव गणों का निवास होता है। अगले पैर में त्वष्टा तथा अणिमा सिद्धियाँ, भुजाओं में महादेव, घुटने की हड्डियों में विधाता एवं सविता तथा खुरों में देवमाता अदिति का निवास है। खुर के पिछले भाग में अप्सराएँ, मध्य में गंधर्व, अग्रभाग में सर्प तथा पश्चिम भाग में राक्षसगणों का निवास है। नाभि के अगल-बगल कटिभाग में पितृ तथा शरीर के निचले भाग में बारह आदित्य तथा केशों में सूर्य की रश्मियों का निवास माना गया है। गौमाता के हृदय में चित्त, यकृत में बुद्धि तथा पुरीतत् नाड़ी में व्रत का निवास माना जाता है। इसके भीतरी भागों को पर्वत, जंगल तथा पृथ्वी माना गया है। जैसे इन स्थानों पर विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियाँ तथा औषधियाँ मिलती हैं उसी प्रकार गाय के लगभग सभी उदरांगों से विभिन्न किस्म की औषधियाँ प्राप्त होती हैं। गौमाता के पेट में भूख और यक्ष, आँतों में सरस्वती तथा मनुष्य, गुर्दों में क्रोध तथा जननेन्द्रियों में प्रजा का निवास माना जाता है। इसके आमाशय में अन्य प्राणियों का निवास माना जाता है।

गौमाता के रक्त में राक्षस तथा मज्जा में मृत्यु का निवास है। इसीलिए इसका मांस खाना वर्जित है। इसको खाने से राक्षसी प्रवृत्ति बढ़ती है तथा मृत्यु जल्दी आती है।

गौमाता का रूप नक्षत्र तथा स्थूलता को आकाश माना जाता है। ऐसा देखा गया है कि गाय हमेशा अपने मालिक की तरफ मुँह करके बैठती या विश्राम करती है। बैठते समय इसे अग्निरूप कहा गया है तथा किसी भी शत्रु को अपने मालिक के पास नहीं आने देती है। उठते समय यह अश्विनी कुमाररूपा होती है।

गौमाता पूर्व की ओर खड़े होते समय इन्द्र, दक्षिण की ओर यमराज, पश्चिम की तरफ विधाता तथा उत्तर की ओर सविता देवता मानी जाती है। गाय के पास से गुजरते समय उसे कभी भी दक्षिण की तरफ न रखें। यह चरते समय चन्द्रमा, देखते समय मित्र और पीठ फेरते समय आनन्दस्वरूपा होती है। गौमाता के नितम्ब ब्राह्मण तथा क्षत्रिय, पिंडलियाँ गंधर्व तथा जांघें बल है। पिछले भाग में इन्द्रपत्नी शचि तथा यमराज का निवास है। इसकी कमर में सारे पितृगण, पूंछ में वायुदेव, रोम कूपों में तैंतीस करोड़ देवता तथा ऋषिगण निवास करते हैं।

गौमाता के चरणों में धर्म का निवास माना जाता है। इसलिए जहाँ गाय रहती है वहाँ अधर्म नहीं होता है। वह स्थान तीर्थ बन जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि गाय पालने से धर्म की तथा बकरी रखने पर अधर्म की वृद्धि होती है। यदि धर्म और अधर्म की संज्ञा न भी दें तो बकरी रखने के स्थान से एक तो बुरी बदबू आती है और दूसरे कभी न कभी उसके मांस को खाना ही है इसलिये गाय और बकरी रखने पर मानसिकता में तो परिवर्तन आता ही है।

गौमाता के स्तन में चारों समुद्र, थनों में वर्षा के अधिकारी देवता तथा दुग्ध कोषों में बादलों का निवास माना जाता है। इसकी चमड़ी में विश्वव्यापिनी शक्ति तथा रोओं में औषधियों का निवास है। गौमाता के मूत्र में गंगा, गोबर में यमुना, दूध में सरस्वती तथा दही में नर्मदा जैसी पवित्र नदियों का निवास होता है। इन तथ्यों से पता चलता है कि गौमाता सर्वतीर्थमयी है। इसलिए उसका कोई भी अंग ऐसा नहीं है जहाँ उसे किसी प्रकार का कष्ट दिया जाय। गाय की सेवा से सभी देवी-देवताओं की सेवा हो जाती है। इसके दर्शनमात्र से ही मनुष्य के सारे पाप-ताप नष्ट हो जाते हैं। अतः गौमाता सर्वदा परम पूजनीया, वंदनीया एवं पालनीया है। उसका हम सर्वदा आदर करें तथा बूढ़ी, अपाहिज एवं रोगी गायों की सेवा में यथायोग्य योगदान दें। (क्रमशः)

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ६१ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया नवम्बर तक अपना नया पता भिजवा दें।

कमजोर नजर

कमजोर नजरवाले मरीज जब डॉक्टर के पास जाते हैं तो डॉक्टर कहते हैं : 'तुम्हारी आँख का पर्दा घिस गया है... तुम्हारी आँख की नस सूख गयी है...' ऐसे मरीजों के लिए नीचे का प्रयोग लाभदायक है :

नीम पर की हरी गुडुच लाकर, पत्थर से बारीक पीसकर, कपड़े में छानकर एक तोला रस निकालें। अगर हरी गुडुच (गिलोय) न मिले तो सूखी गिलोय का चूर्ण १२ घण्टे तक भिगोकर रखें। उसके बाद कपड़े से छानकर उसका एक तोला रस निकालें। इस रस में छः गुंजाभार शुद्ध शहद एवं उतनी ही मात्रा में अच्छे स्तर का सेंधा नमक डालकर खूब घोंटें। अच्छी तरह से एकरस हो जाने पर इसे आँखों में डालें।

डालने की विधि : रात्रि को सोते समय बिना तकिये के सीधे लेट जाएँ। फिर आँख की ऊपरी पलक को पूरी तरह उलट करके ऊपरी सफेद गोलक पर रस की एक बूँद डालें एवं दूसरी बूँद नाक की ओर के आँख के कोने में डालें और आँखें बंद कर लें। पाँच मिनट तक आँखों को बंद रखते हुए आँखों के गोलकों को धीरे-धीरे गोल-गोल घुमायें ताकि रस आँख के चारों तरफ भीतरी भाग में प्रवेश कर जाये। सुबह गुनगुने पानी से आँख धोयें। ऐसा करने से दोनों आँखों से बहुत-सा मैल बाहर आयेगा, उससे न घबरायें। यही वह मैल है जिसके भरने से दृष्टि कमजोर हो जाती है। प्रतिदिन डालने से धीरे-धीरे वह एकत्रित हुआ कफ बाहर निकलता जायेगा और आँखों का तेज बढ़ता जायेगा। आश्चर्य तो निरंतर चार महीने तक डालने पर होगा।

आँख के मरीजों को सदैव सुबह-शाम ४ तोला पथ्यादि क्वाथ जरूर पीना चाहिए।

पथ्यादि क्वाथ : हरड़, बहेड़ा, आँवला, चिरायता, हलदी और नीम की गिलोय को समान मात्रा में लेकर रात्रि को कलईवाले बर्तन में भिगोकर सुबह उसका काढ़ा बनायें। उस काढ़े में एक तोला पुराना गुड़ डालकर थोड़ा गरम-गरम पियें।

अर्श (बवासीर) का इलाज

सूरण (जमीकंद) को उबालकर, सुखाकर उसका चूर्ण बना लें। यह चूर्ण ३२ तोला, चित्रक १६ तोला, सोंठ ४ तोला, कालीमिर्च २ तोला, गुड़ १०८ तोला... इन सबको मिलाकर छोटे-छोटे बेर जैसी गोलियाँ बना लें। इसे सूरण वटक कहते हैं।

ऐसी ३-३ गोलियाँ सुबह-शाम खाने से अर्श (बवासीर) में लाभ होता है।

[नोट : १ तोला = ११.५ ग्राम]

पपीता

पपीते के मुख्य देश मेक्सिको एवं वेस्ट इन्डीज के टापू हैं। सत्रहवीं सदी की शुरूआत में उसका प्रसार भारत, अफ्रिका, ऑस्ट्रेलिया इत्यादि देशों में हुआ।

कच्चे पपीते के दूध में पेपेइन नामक पाचक रस (Engime) होता है - ऐसा आज के वैज्ञानिक कहते हैं। किन्तु कच्चे पपीते का दूध इतना अधिक गर्म होता है कि अगर उसे गर्भवती स्त्री खाये तो उसके गर्भस्राव की संभावना रहती है और ब्रह्मचारी खाये तो वीर्यनाश होने की संभावना रहती है।

अल्प मात्रा में कच्चे पपीते का रस कृमि के निकास के लिए एवं स्त्रियों के मासिकस्राव के अवरोध को मिटाने के लिए लाभदायी है।

कच्चे पपीते का दूध चेहरे पर लगाने से खीलें (मुँहासे) मिटती हैं। दाद पर लगाने से दाद मिटती है।

मस्सों पर दिन में दो-तीन बार लगाने से मस्से जल जाते हैं अथवा झर जाते हैं।

पका पपीता मधुर, गुरु, उष्ण, सारक,

(शेष पृष्ठ २३ पर)

देहरादून : लुधियाना में प्रेम, भक्ति, माधुर्य एवं आनंद की सरिता बहाकर आत्मारामी, ब्रह्मवेत्ता संत परम पू. बापूजी २९ सितम्बर '९७ को देहरादून पधारे। देहरादून की जनता पलकें बिछाये वर्षों से उनकी बाट जोह रही थी। अतः संतप्रवर के आने की खुशी से देहरादून ही नहीं, सम्पूर्ण उत्तरांचल झूम उठा। मानो प्यासे को पानी के बजाय अमृत का कलश मिल गया हो और सचमुच वे पू. बापू की अमृतवर्षी नजर, उनके मुखारविन्द से प्रवाहित ब्रह्मज्ञान के सत्संग एवं उनके शरीर से निकलते ब्रह्मसुख के आन्दोलनों से निहाल हो गये।

२ अक्तूबर से प्रारम्भ इस सत्संग अमृतवर्षा में बंद एवं चक्का जाम हड़ताल के बावजूद सम्पूर्ण उत्तरांचल से अपार जन-सैलाब पू. बापू की अमृतवाणी का रसपान करने उमड़ा। यहीं उत्तर प्रदेश विधानसभा के सभापति श्री नित्यानंद स्वामी ने माल्यार्पण कर पूज्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त किया तथा स्वागत में बोलते हुए कहा : **''आपकी अमृतवाणी से आज सारे देश का ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व का वातावरण बदल रहा है। यह आपके तप का ही चमत्कार है। आपकी इस करुणा-कृपा को इस देश की जनता नहीं भूल सकती है। उत्तराखंड जिस समय राज्य होगा उस समय हम यहाँ एक बहुत बड़ा आयोजन करेंगे और उस समय हम आपसे विनती करेंगे कि आप उसका उद्घाटन अपने कर कमलों से करें।''**

३ अक्तूबर '९७ को प्राणीमात्र के परम हितैषी पू. बापूजी के आत्मसाक्षात्कार दिवस पर देहरादून के घर-घर में हरिरस के घूंट पिलाने के लिए गुरु के दीवानों ने विशाल हरिनाम संकीर्तन यात्रा निकाली। यह संकीर्तन यात्रा इतनी सम्मोहक थी कि जहाँ-जहाँ से गुजरती, लोग **'मधुर मधुर नाम हरि हरि ॐ'** गुनगुनाते हुए साथ-साथ चल देते थे।

यहीं पू. बापू ने कई स्थानों पर काफी समय से प्रतीक्षा कर रहे भक्तों को आत्मसाक्षात्कार दिवस पर फोन पर विशेष सत्संग देते हुए कहा :

''साक्षात्कार का मतलब है कि जन्म-जन्मांतर से भटकता हुआ जीव अपने शिवस्वरूप को पहचानकर उसमें स्थिर हो जाये और झूठा भ्रम मिट जाये।

एक देश में दो प्राइम मिनिस्टर तो नहीं हो सकते लेकिन एक कमरे में दो तो क्या दस आत्मारामी व्यक्ति रह सकते हैं। पद की अपेक्षा मानवता ऊँची चीज है लेकिन मानवता से भी परमात्मपद में विश्रान्ति बहुत ऊँची चीज है। दुनिया के बड़े-बड़े उद्योगों में अपने को खपाने की अपेक्षा भगवान में दो पल रहना अनंतगुना अच्छा है लेकिन भगवान में अपने को डुबो देना... जैसे लहर सागर में, बिन्दु सिन्धु में और जीव जब गुरुकृपा से ब्रह्म में अपने को डुबो देता है उसी घड़ी का नाम ही आत्म-साक्षात्कार है।''

विद्यार्थियों के लिए आयोजित विशेष सत्संग में पूज्यश्री ने उन्हें तेज-ओजपूर्ण बनने के कई प्रयोग कराये जिससे ये बालक अपनी संस्कृति के पोषक बनकर, ऋषि-मुनियों की अनूठी सांस्कृतिक विरासत के आधारस्तंभ बन सकें।

अन्तिम दिन पू. बापूजी प्रातःकालीन सत्संग समाप्त करने ही जा रहे थे कि गड़गड़ाहट के साथ जोरदार बारिश आ गयी। ऐसे में पू. बापूजी **'मधुर मधुर नाम हरि हरि ॐ'** का कीर्तन गाने लगे और अपने आत्मीय जादू से लोगों को ऐसा बाँधा कि सभी बारिश की परवाह किये बिना पू. बापूजी के मंच के आगे करतलध्वनि के साथ गाते हुए नृत्य करने लगे। चारों ओर बारिश की बौछारें और बीच में नृत्य करते पू. बापूजी और उनके भक्तगण ऐसे लग रहे थे जैसे-श्रीकृष्ण गोवर्धन लिए खड़े हों और सभी ग्वाल-बालों ने उसके नीचे आश्रय ले रखा हो।

आखिरी दिन श्रद्धालु लाखों की संख्या में उमड़े तथा देहरादून में लोगों को यह कहते हुए सुना गया : **''इतनी शान्ति और श्रद्धा के साथ सत्संग का आनंद लेते हुए इतना बड़ा भारी जन-सैलाब यहाँ पहले कभी न हमने देखा और न सुना। सचमुच पू. बापूजी यहाँ नया इतिहास रचकर जा रहे हैं।''** सभी ने अश्रुपूरित नेत्रों से अगम-निगम के औलिया को विदाई दी। व्यासपीठ से ही पू. गुरुवर पानीपत के लिए रवाना हो गये।

पानीपत : पानीपत योग वेदांत सेवा समिति के उत्साही भाइयों ने पानीपतवासियों को पूज्य बापू का सान्निध्य बार-बार मिलता रहे इस हेतु से पिछले कई महीनों से आश्रम-निर्माण का संकल्प किया था। आश्रम के लिए जगह देखी, भूमि खरीदी व काफी प्रयत्नों के बाद उन्हें केवल एक दिन

का समय मिल पाया। पूज्य बापू के करकमलों द्वारा बहुजन-हिताय बहुजनसुखाय साधना-सेवा-संस्कार के विरल समन्वयरूप संत श्री आसारामजी आश्रम का भूमिपूजन ६ अक्तूबर '९७ को सम्पन्न हुआ। ५ अक्तूबर को देहरादून के विशाल सत्संग समारोह की पूर्णाहुति के पश्चात् पानीपत से पूज्य बापू को लेने आये भक्तों की कारों के काफिले के साथ पूज्य बापू पानीपत के लिए रवाना हुए। मार्ग में काफी समय से इंतजार कर रहे शामली के हजारों भक्तों को सत्संग-कीर्तन में कुछ समय झुमाते तथा हाइवे पर खड़े कुछ गाँवों के भक्तों का माल्यार्पण कार में बैठे ही स्वीकार करते हुए रात्रि को पानीपत पहुँचे।

यहाँ भी विशाल सत्संग मंडप, भूमिपूजन के लिए यज्ञमंडप व एक रात्रि विश्राम करने हेतु शीघ्रातिशीघ्र तैयार की गई कुटिया, समिति के उत्साही भाइयों के सेवा-सत्संग-प्रेम का दर्शन करा रही थी। वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ भूमिपूजन संपन्न हुआ तथा इसके बाद १ बजे तक सत्संग चला। १ बजे तक पानीपत के भक्तों को हरिरस पिलाने के बाद दिल्ली से लेने आये भक्त पूज्य बापू को दिल्ली ले गये। पूज्यश्री करीब ४ बजे दिल्ली पहुँचे।

दिल्ली : श्री सुरेशानंदजी के सत्संग की पूर्णाहुति पर ज्यों-ही पू. बापू के कदम मंच की ओर बढ़े त्यों-ही भक्तों के स्वागतगीतों के साथ इन्द्र ने भी वर्षा से स्वागत किया। भक्तों के उत्साह में द्गुनी वृद्धि हुई... 'बरसेगा महाराज ! रंग बरसेगा...' के साथ भीगने की परवाह किये बगैर भक्तगण नाचने-झूमने लगे। कुछ समय में ही बारिश बंद हुई तथा अभूतपूर्व सत्संग हुआ। सत्संग के बाद पूज्यश्री पहुँचे दिल्ली में Esskay पर, जहाँ निवास-स्थान था। एक दिन का एकांतवास निश्चित था मगर दूर-सुदूर क्षेत्रों से दर्शन के लिए आई समितियाँ बैठी रहीं द्वार पर... आखिर पूज्यश्री को शाम को दर्शन देने ही पड़े।

७ अक्तूबर से शुरू हुआ तृतीय विश्वशांति सत्संग समारोह दक्षिण दिल्ली के लोदी स्टेट स्थित जाने-माने नेहरु स्टेडियम में। दक्षिणि दिल्लीवासियों की प्यास बुझाने के लिए मंच पर पूज्य बापू का प्रथम आगमन शाम ४ बजे था। एक किलोमीटर से भी ज्यादा लंबी कतार थी भक्तों तथा सेवाधारियों की। सेवा में बजाने आयी दिल्ली की मशहूर बैण्ड ने स्वागत में **'मधुर मधुर नाम, हरि हरि ॐ...'** के स्वर अलापे। इस कीर्तन को सुनकर भक्त थिरक उठे... धवल कार में, धवल वस्त्रधारी, धवल जीवन के प्रेरक, सौम्यमूर्ति, शांतिदाता, सुख-स्नेह की सरिता बहानेवाले संतश्री नृत्य करते-करते अपनी अद्वितीय चाल से तृतीय विश्वशांति सत्संग समारोह के भव्य मंच पर आसीन हुए।

क्रमशः आरंभ हुए स्वागत-गीत, माल्यार्पण और उसके बाद पूज्यश्री ने तृतीय विश्वशांति सत्संग समारोह का प्रथम शंखनाद किया। छः दिन चले इस विशाल सत्संग समारोह में कई विद्वान, लेखक, कवि, भक्तिमति माताएँ-बहनें, शिक्षाविद्, बालक-बालिकाएँ, राजनेता एवं वरिष्ठ अधिकारी भी शामिल थे, जिनमें से कइयों का तो पता चला पर कइयों का पता तक नहीं चल पाया कि वे हैं कौन ! भला, वे पता जनाने आये भी तो नहीं थे। वे तो आये थे, भगवान की रसमयी आह्लददायिनी सत्संग-सरिता में मंगल स्नान करने और कर ही रहे थे। उनमें से थे मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंह, मध्य प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री एवं वर्त्तमान में मध्य प्रदेश के छिंदवाड़ा से निर्वाचित श्री सुन्दरलाल पटवा, पूर्व सूचना एवं प्रसारणमंत्री व सांसद श्री वसंत साठे, लोकसभा के उपाध्यक्ष एवं वर्त्तमान सांसद श्री सूरजभान, हरियाणा राज्य के मंत्री श्री रामविलास शर्माजी, दिल्ली की महापौर आदि। उपरोक्त सभी ने सत्संग का रसास्वादन किया।

सांसद व लोकसभा के उप सभापति श्री सूरजभान ने इस प्रसंग पर अपने मानव-जीवन का वास्तविक अनुभव बताते हुए कहा :

''स्मशान-भूमि से आने के बाद हम शरीर की शुद्धि के लिए स्नान कर लेते हैं। विदेशों से आने के बाद मेरे शरीर पर ऐसे ही परमाणु साथ लग गये परन्तु यह मेरा परम सौभाग्य है कि यहाँ महाराजश्री के दर्शन व पावन सत्संग-श्रवण से मेरी सफाई हो गयी व पवित्रता आ गयी। विदेशों में मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता हुई कि वहाँ के अनेकों भारतवासी पू. बापू के प्रवचनों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सुन रहे हैं। यहाँ मैं बोलने नहीं, सुनने आया हूँ। मेरा यह सौभाग्य है कि यहाँ मुझे सुनने का सुअवसर प्राप्त हुआ है।

यह देश धर्मप्रधान देश है। In India religion gave birth politics but in Europe politics gave birth to religion. विदेशों में राजनीति पहले और धर्म बाद में है पर यहाँ भारत में धर्म का स्थान पहले व राजनीति बाद में है।''

मध्य प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री श्री सुंदरलाल पटवा ने कहा :

''इस देश को संतों की कृपा ही बचा सकती है। हम किसको पुकारें ? देश को कौन बचायेगा ? हम दीन-हीन-अकिंचन लोग किसे पुकारें, बापू ! उम्मीद की एक ही जगह बची है और वह है पूज्य बापू जैसे संत ! यहाँ से

प्रेरणा मिलेगी, ऊर्जा मिलेगी। मेरे जैसे सामान्य कार्यकर्त्ता को आपने जो प्रेम और आशीर्वाद दिया उससे भी बड़ी आपकी मेरे पर कृपा है। आपकी कृपा मेरे पात्र से भी बड़ी है। मुझे इतना ही आशीर्वाद चाहिए कि मैं कभी 'मैं' बन गया यह भाव मेरे मन में न आये।''

११ अक्तूबर को भारी संख्या में सत्संग में विद्यार्थी युवक-युवतियाँ आये। पू. बापू ने कहा :

''दक्षिणा चाहिए मुझे। क्या ? 'तमाकू, पान-मसाला, बीड़ी, सिगरेट, शराब आदि व्यसन कभी नहीं करेंगे। हानिकारक सौन्दर्य-प्रसाधनों से बचेंगे'- इस प्रकार का वचन दे दो दक्षिणा में।''

... और हजारों हाथ ऊपर हो गये। सभीने संकल्प किया। शंखनाद एवं तालियों की गड़गड़ाहट से गगन गूँज उठा। ये सुख के दिन तो देखते ही देखते बीत गये और हजारों आँसूभरी आँखों ने भावभीनी विदाई दी।

ग्वालियर : पू. बापू की अमृतमयी वाणी सुनने को आतुर ग्वालियर की जनता को १३ अक्तूबर की शाम तथा १४ अक्तूबर को सुबह व शाम सत्संग-सरिता में नहलाकर उसी दिन पूज्यश्री ने ग्वालियर से प्रस्थान किया। ग्वालियर आश्रम में उमड़े हजारों भक्तों को अपने आत्मा-परमात्मा को छूकर आते मधुर सत्संगामृत से सराबोर कर पू. बापूजी ने सिकंदरा स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम के लिए कूच किया। यहाँ पहुँचते ही मोक्षधाम में बेसब्री से इन्तजार कर रहे हजारों भक्तों ने पू. बापू का भावभीना स्वागत किया।

आगरा : यहाँ दिनांक : १६ से १९ अक्तूबर तक आयोजित ध्यानयोग वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर में भारत के अनेक प्रान्तों के एवं विदेशों से हजारों की संख्या में साधक गण पू. बापू के पावन सान्निध्य में ध्यान की गहराइयों का एवं योग के सूक्ष्म रहस्यों का अनुभव करने आये। सिकंदरा मार्ग स्थित यह मोक्षधाम चलता-फिरता शहर बन गया था। ऐसा शहर जो संसारी विकारों से दूर था। दिन-दुनियाँ से बेखबर भक्तों की केवल एक ही धुन थी : पू. बापू के दर्शन करना, उनके प्रवचन सुनना और उनकी सेवा में रत रहना। आश्रम में आनेवाली इस भीड़ के लिए योग वेदान्त सत्संग सेवा समिति ने अच्छी व्यवस्थाएँ की थीं।

आश्रम की १५ बीघा भूमि पर लगभग १.५० लाख लोगों के लिए पंडाल बना। इसके अलावा अलग से लगभग १०० बीघा जमीन पर टेन्ट लगाकर भक्तों के ठहरने की व्यवस्था की गयी थी। आश्रम में हजारों भक्तों के लिए भोजन की समुचित व्यवस्था थी। जहाँ सात्त्विक भोजन, प्रसाद, अल्पाहार भक्तों को सहज ही उपलब्ध कराया गया था। भक्तों की विशाल भीड़ को देखते हुए सत्संग स्थल पर पीने का पानी, शौचालय, जूता स्टैन्ड, सामान घर, स्वास्थ्य सुरक्षा, अग्निशामक, पार्किंग, खोया-पाया और रेलवे आरक्षण के लिए मोक्षधाम में चुस्त व्यवस्थाएँ की गयी थीं।

समूचे मोक्षधाम की सफाई व्यवस्था में पू. बापू के लगभग ५ हजार भक्तों की टोली चुस्ती से लगी थी। इन सेवाधारियों में मुख्यतः मथुरा, वृन्दावन, दिल्ली, कासगंज, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल आदि प्रान्तों से आये भक्तगण शामिल थे।

पू. बापूजी के दर्शन के लिए क्लोज टी. वी. सर्किट की भी व्यवस्था की गयी थी। दूर-दूर से आनेवाले भक्तों को मोक्षधाम पहुँचाने के लिए महानगर बस सेवा की १५० बसें, १०० टेम्पुओं एवं ५० मेटाडोरों को लगाया गया था।

जब सैकड़ों किलोमीटर दूर से पदयात्रा करके दर्शन करने आये भक्तों ने दर्शन के बाद ही अन्न-जल ग्रहण करने का अपना संकल्प बताया तब आत्मारामी पू. बापूजी को अपनी मौन कुटिया से अपने भक्तों पर करुणा करके बाहर आना पड़ा। दर्शन, प्रसाद पाकर कैलारस (मुरैना) और सरमथुरा से आये इन उत्साही पदयात्री भक्तों ने अन्न-जल ग्रहण किया।

यहीं पर ब्रह्मकुण्ड से पू. बापू ने दूर-दूर से आये अपने भक्तों को ब्रह्मस्नान करवाया। अपने प्यारे प्रभु के हाथों स्नान करके ये भाग्यशाली भक्त पवित्र हो गये।

पू. बापू के अमृतवाणी के अमृत पीने के लिए हवाई जहाज से आये नगर विकास मंत्री श्री लालजी टण्डन ने और उनके साथ आये विधायकों ने माल्यार्पण कर पू. बापूजी का आशीर्वाद प्राप्त किया। उनके स्वागत में बोलते हुए लालजी टण्डन ने कहा : **''संतों के चरणों में बैठकर जिन्हें पावन शब्द सुनने का अवसर मिलता है वे बड़े सौभाग्यशाली होते हैं। भक्ति की जो धारा पू. बापू बहा रहे हैं उससे आप यह निश्चित समझें कि आपके सारे कष्टों का, परेशानियों का अंत हुआ।''**

*

अमदावाद : १५ अक्तूबर '९७ को संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद के प्रांगण में 'जनसेवा ही प्रभुसेवा' की उक्ति को चरितार्थ करती हुई तीन सेवा-प्रवृत्तियों का शुभारंभ हुआ।

गुजरात राज्य के आरोग्य मंत्री श्री डॉ. के. सी. पटेल के हाथों 'चलते-फिरते आयुर्वैदिक औषधालय' का उद्घाटन हुआ। गाँवों की जो गरीब जनता किराया खर्च करके दवाखाने तक नहीं जा सकती एवं जिन्हें ऐलोपैथी की महँगी, 'साइड

इफेक्ट' पैदा करनेवाली दवाएँ लेना सुलभ नहीं होता उनके लिए 'चलता-फिरता औषधालय' एक आशीर्वाद के समान होगा।

आज से ठीक १० वर्ष पूर्व अमदावाद आश्रम में धन्वन्तरि आयुर्वैदिक दवाखाने का शुभारंभ हुआ था। पूज्यश्री के आशीर्वाद से आज सूरत में १८ बिस्तरवाले आयुर्वैदिक अस्पताल, औषध-उद्यान, औषध निर्माण केन्द्र और अनेक आयुर्वैदिक चिकित्सालय लोकसेवा में क्रियान्वित हुए हैं।

डॉ. के. सी. पटेल ने उद्घाटन करते हुए बताया : ''भारत भर में आयुर्वैदिक दवा का अधिक मात्रा में उपयोग दो ही राज्यों में होता है : एक केरल एवं दूसरा गुजरात। हम भाग्यशाली हैं कि पू. आसारामजी बापू की प्रेरणा से अपने राज्य को अब एक 'चलता-फिरता औषधालय' मिला है।''

आश्रम की प्रवृत्तियों की प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा :

''मैं आदिवासी विस्तार का प्रतिनिधि हूँ और मैंने स्वयं अपनी ही आँखों से देखा है कि पूज्य बापू के सत्संग एवं समाज-उत्थान के कार्यक्रमों से हमारे क्षेत्र का सबसे बड़ा प्रदूषण शराब एवं तमाकू करीब ८० % तक कम हो गया है। पूज्यश्री के सत्कार्यों से मैं खूब प्रभावित हुआ हूँ। आज का यह 'चलता-फिरता औषधालय' गरीबों एवं आदिवासियों की सेवा हेतु आश्रम का एक प्रशंसनीय कदम है एवं सरकार इसमें हरसंभव सहायता प्रदान करेगी।''

गांधीनगर के सांसद श्री विजयभाई पटेल ने नेत्र-चिकित्सालय का उद्घाटन किया। इस चिकित्सालय में डॉ. राजेश लुहाणा हर बुधवार को सुबह ७ से १२ बजे तक नेत्र-चिकित्सा करेंगे।

अंत में... स्वीट्जरलेण्ड से आये हुए दाँत के डॉक्टर श्री रेने कुलीन एवं उनकी पत्नी ने तीन दिवसीय दंत चिकित्सा शिविर की शुरूआत की। उनका अभिवादन अमदावाद इलेक्ट्रीसीटी के एक्जीक्युटिव डॉयरेक्टर श्री बी. एस. रूबी ने किया। डॉ. रेने कुलीन आश्रम की समाज-कल्याण की प्रवृत्तियों से काफी प्रभावित हुए एवं उन्होंने बताया कि वे खुद हर वर्ष आश्रम में आकर निःशुल्क सेवा प्रदान करेंगे। आश्रम में प्राप्त सेवा को उन्होंने अपना अहोभाग्य माना एवं गुटखे तथा पान-मसाले से होनेवाले जबड़े के रोगों एवं कैन्सर के विषय में चेतावनी दी।

जब-जब समाज पर प्राकृतिक प्रकोपों का आक्रमण हुआ है तब-तब पूज्य बापू के सन्निष्ठ साधकों ने निष्काम भाव से आपदाग्रस्त इलाकों के लोगों की मदद की है। फिर भले ही वह महाराष्ट्र का भूकंप हो, कच्छ का अकाल हो या सूरत का प्लेग हो... उन्होंने दुःखी-पीड़ितों के आँसू पोंछकर उन्हें आश्वासन दिया है और रोगियों को दवा दी है। बाढ़ में बेघर हुए लोगों को घर, असरग्रस्तों को अनाज, वस्त्र एवं नकद देकर जनसेवा को दैवीकार्य मानकर संपन्न किया।

इस वर्ष अतिवृष्टि के कारण अनेक इलाकों में बाढ़ का पानी भर आया जिससे लोगों के घर, अनाज तथा घर का सारा सामान बर्बाद हो गया। हेलिकॉप्टरों द्वारा अन्न के पैकेटों का वितरण करने से लेकर विसनगर में गरीबों के लिए २४ घरों का तो निर्माण-कार्य श्री योग वेदांत सेवा समिति ने उत्साह से पूरा कर दिया हैं।

दैवी सेवा का ऐसा ही दूसरा ज्वलंत उदाहरण श्री योग वेदांत सेवा समिति ने जबलपुर में भी प्रस्तुत किया था। जबलपुर में हुए भूकंप से बहुत बड़ी तबाही मची थी। कितने ही गरीब बेघर हो चुके थे। आश्रम की सेवा समिति ने सेवा के इस अवसर का लाभ उठाकर भूकंप-पीड़ितों एवं गरीबों के लिए ३४ मकान तो बनाकर उन्हें प्रदान कर दिये हैं।

प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी पूज्य बापू की प्रेरणा से श्री योग वेदांत सेवा समिति द्वारा दीपावली के पर्व पर आदिवासी एवं दूर-दूर के गाँवों की गरीब जनता के लिए दो भण्डारों का आयोजन किया है। पहला भण्डारा कोटड़ा (राजस्थान) में दिनांक : २८ अक्तूबर '९७ को रखा गया है।

दूसरा भण्डारा भिलोड़ (गुजरात) के आदिवासी इलाके में रखा गया है।

भण्डारे में सहयोग देकर समिति के सदस्य अपने भाग्य का निर्माण करते हैं एवं पुण्यों का संचय करते हैं। भण्डारे में सक्रिय होनेवाले सेवाधारी पूज्यश्री के दैवी कार्य में सहयोगी होने के लिए मिले हुए अवसर को अपना भाग्योदय मानते हैं।

*

पू. बापू के अन्य सत्संग कार्यक्रम

भावनगर में भक्ति ज्ञान योग वर्षा : १३ से १६ नवम्बर '९७. सुबह ९-३० से ११-३०. शाम ३ से ५-३०. जवाहर मैदान, भावनगर। संपर्क फोन : ५६३०९९, ४२७४१०, ५१०३३४.

दिल्ली में निकली शोभायात्रा जिसमें दिल्ली के सत्संगियों ने निकट से दर्शन की अपनी प्यास पूर्ण करने में सफलता पा ही ली।

दिल्ली महानगर में पूज्य बापू के शिष्यो द्वारा विचार प्रदूषण दूर करने हेतु निकाली गई विशाल हरिनाम संकीर्तन यात्रा।

आत्मसाक्षात्कार दिन पर अहमदावाद में निकली वाहनों से सुसज्जित कीर्तन यात्रा।

धुलिया (महाराष्ट्र) के कीर्तन-प्रेमी साधकों ने झूमते-झुमाते धुलिया से पदयात्रा निकाली जिसकी जन्माष्टमी महोत्सव पर सूरत आश्रम में गुरुदर्शन से परिसमाप्ति हुई।

कासगंज (एटा, उ.प्र) में निकली संकीर्तन यात्रा में हरि हरि बोल के नारे गली-गली में गूँजे।

आत्मसाक्षात्कार दिवस पर भव्य प्रभात फेरी ने समग्र देहरादून और उत्तरांचलवासियों को आकर्षित कर दिया।

REGISTERED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABAD PSO LICENCE NO. 207 Regd. No.GAMC/1132 BOMBAY, BYCULLA PSO LICENCE NO.

ये है संत श्री आसारामजी गुरुकुल आश्रम, डुंगरा, वापी। भारी वर्षा के बावजूद भी गुरु मंदिर पर कलश स्थापनविधि समारोह संपन्न हुआ।

आगरा आश्रम की संत कुटीर

संत आसारामजी आश्रम का उद्देश्य : सबका भला... सब तुम्हारे तुम सभी के... धर्मपरिवर्तन कराये बिना ही सबकी सेवा ईश्वर की सेवा है। (पाली. राज.)

देहरादून के हजारों युवानों ने तम्बाकू व पान-मसाला छोड़ने का व युवतियो ने हानिकारक सौन्दर्य-प्रसाधन का त्याग करने का संकल्प लिया।

बाढ़ संकट से देला, कंसारा कूई (महेसाना) में बेघर बने हुए निराश्रितों के लिए आश्रम द्वारा गृहनिर्माण सेवा-प्रवृत्ति